उत्तरगाथा

[illegible]

रेवती किवाड़ भिड़काकर झाँक रही है, सुदेव सूरज के डूबने के बाद रोज क्यों आता है ? फिर भी अँधेरा अभी तक आँगन मे उतरा नही है। अपना सुदेव सिर पर पगड़ी की तरह अँगोछा बाँधे इधर-उधर आँखें नचा रहा है। मन-ही-मन रेवती के लिए ही तो नही अकुला रहा है! धूप में दिन-भर हल चलाते-चलाते मुंह कैसा सूख गया है। भूख-प्यास से अपने ही होंठ कैसे काट रहा है! ताम्बे की तरह लम्बा-छरहरा, सौम्य मूर्ति-सा सुदेव रोज शाम को ऐसा ही मुर्झाया हुआ दीखता है।

पहली रात को जब सुदेव उससे इसी घर में मिला था तब वह कितना सुकुमार लगता था! सचमुच, बाबू ने अपनी रेवती के लिए सपनों का राजकुमार खोज दिया है। जब सुदेव ने अचानक उसे अपनी तरफ खींच लिया था तब रेवती उसकी गोद मे महराती हुई बोली थी, "मैं तो पाँचवीं कक्षा तक पढ़ी हूँ। 'रानी केतकी की कहानी', 'सोरठी बृजाभार', 'बेटी बेचवा', 'बिदेसिया', 'बसन्त बहार', 'डोमनी रानी नाम फूल बसिया', राहुल और भिखारी ठाकुर की सब किताबें पढ गयी हूँ। तुम किस कक्षा तक पढ़े हो? सुदेव थोड़ी देर तक लजा गया था और अपने बंधन को स्वतः ढीला हो जाने दिया था। उसे अचरज भी हो रहा था और खुशी भी कि अपने यहाँ अब हरिजन टोली में भी लड़कियाँ पढने लगी हैं। उसने पूछा, "तुम्हारे टोले में और भी कितनी लड़कियाँ पढ़ी हैं ?"

"कोयली, परबतिया, जिऊती, फुलवा, परेमी ढेर लड़कियाँ पढ़ गयी हैं। सब के मरद बी० ए०, इन्ट्रेंस पास हैं।"

"इसका मतलब हुआ कि तुम्हारा मरद करिया अक्षर भैंस बराबर है।"

"पाठशाला आज तक गये ही नहीं ? तुम्हारे गाँव में कोई स्कूल नहीं है क्या ?"

"बड़ी-बड़ी कहानी है।" सुदेव ने बताना शुरू किया था, "एक स्कूल है रतनपुर में। दो-चार दिन गया था। वहाँ के बाबू लोग उस स्कूल में हमारे टोले के लड़कों को उनके लड़के घेर-घेरकर मारते थे। हमें नहीं मालूम पड़ता था कि हमारा कसूर क्या है ? पहले ही दिन मुझे एक लड़के ने बेंच के ऊपर धकेल दिया था। एक बात और थी कि रतनपुर वालों ने आज तक मेरे टोले को कभी वोट डालने नहीं दिया था। परसाल गिरधारी चाचा सरपंच के लिए खड़े हुए थे। वोट के चार-पाँच दिन पहले से ही गिरधारी चाचा आज तक लापता हैं। इन्हीं सब कारणों से बाबू को पढ़ाई-लिखाई से नफरत है। अरे कलक्टर होना है क्या ? तुम्हीं पढ़ गयी तो क्या हो गया, एक अनपढ़ से ब्याह दी गयी न ?"

ऐसा सलोना मरद किसी को बड़े भाग्य से मिलता है—यही बात सोचती हुई रेवती बोली, "तो क्या हुआ ? मैं तुम्हें इतना पढ़ा दूंगी कि भिखारी ठाकुर की सारी किताबें पढ़ने लगोगे।"

सुदेव को बड़े जोरों से हँसी आ गयी थी। उसने हँसते हुए इतना ही कहा था, "औरत-मरद में एक को होशियार होना चाहिए। तू मुझे अकल-बुध देना, मैं तुझे ताकत दूंगा।" इसके बाद तो वह सांड़ की तरह पुष्ट सुदेव की बांहों में सिकुड़ ही गयी थी।

···रेवती की तन्द्रा अचानक टूटती है। सुदेव आँगन से लेकर भीतर तक किसी को न देखकर जोर से चिल्लाता है, "माई रे ! प्यास के मारे जान निकली जा रही है। कहाँ मर गयी सब···?"

रेवती घबराकर आँगन में निकल आयी और बीता-भर घूंघट काढ़कर अपने ही मरद के सामने खडी हो गयी। परन्तु सुदेव की झुंझलाहट तब भी खत्म नहीं हुई थी। अभी तो मेहरारू को गौना में आये एक सप्ताह भी नहीं हुआ था। आज आँगन में निकल आयी है, कल पड़ोस में निकलकर किसी के यहाँ उधार-पैंचा के लिए जायेगी···फिर खेत···बधार। उसने डपटकर पूछा, "माई कहाँ गयी है ?"

"घर में शायद खर्ची नहीं थी। उसी के बन्दोबस्त में गयी हैं। यह लो

पानी।" वह उसी तरह लोटा उसकी ओर बढ़ाती हुई घूँघट के अन्दर से बोली।

"खाली पानी, और कुछ नहीं ?"

"तुम्हारे लिए ही तो माई बन्दोबस्त में गयी हैं कि बाबू भूखे-प्यासे हलवाही से लौटेगा तो क्या खायेगा ?"

"आग लगे तुम्हारी माई के इस घर में। भोर से किरण डूबने तक लगातार हलवाही करो तब भी कहीं कोई पूछ नहीं।"

"मालिक ने दुपहरिया को कुछ दिया होगा न ?"

रेवती के इस सवाल से सुदेव और भी आग हो गया। उसने कहा, "ले जा पानी। मुझे नहीं पीना है।"

"इसमें मेरी गलती क्या है ?"

संभवतः सुदेव को उस पर मोह लौट आया हो। उसने उसके हाथ से लोटा झपटकर गट-गट खाली पानी पी लिया। 'बाबू का मिजाज कैसा है ?"

"अभी उसी तरह है।"

"वैद्य जी आए थे ?"

"नहीं आए थे। कहते हैं, यहीं ले आओ।"

"काहे, हमारे घर पर आने में उन्हें कोई तकलीफ है क्या ?"

"कहते थे, नहा-धो लिया है। कल सवेरे आयेंगे।"

सुदेव पस्त होकर आगन में ही पाड़ी की नाद पर दोनों हाथ से बूढ़े की तरह माथा पकड़कर बैठ गया था, जैसे बाबू नहीं, वही बीमार हो। रेवती फिर उसकी चिंता में शामिल होने के ख्याल से बोली, "सरकारी वैद्य होकर वे ऐसी बातें क्यों करते हैं ?"

"मुझे क्या मालूम ? तुम्हें अपनी पढ़ाई पर गुमान है तो जाकर पूछती क्यों नहीं ?"

"इसमें गुमान की क्या बात है ? सरकार ने तो इस टोले में उन्हें इसीलिए भेजा होगा न कि गरीब आदमी का इलाज करें। माई ने जब बताया तभी मुझे भी गुस्सा आ गया था। संस्कृत और वैद्य अभी भी हरिजन टोली से घबराते क्यों हैं ?"

सुदेव ने उसकी तरफ आँखें तरेरकर ताका। वह अभी तक घूंघट काढ़े हुए थी। उसने कहा, "जा, अन्दर जा। नहीं तो माई कहेगी कि दोनों नाद पर खुल्लमखुल्ला बतिया रहे थे।"

रेवती घर में घुस गयी।

उसके जाते ही सुदेव की छटपटाहट फिर बढ़ गयी थी। यह आँगन, घर, पड़ोस, सर्वत्र कैसा विरान लगता है। बाबू ने कमाते-कमाते खाट पकड़ लिया। पैदा होते ही कंधे पर हल चढ़ गया। ऊपर से रोज-रोज मालिक से मिहनत-मजदूरी के लिए खिच-खिच। पता नहीं कब वह हरिजन टोली का होलिका-दहन कर दे। सूखाड़ और बाढ़ से उसे क्या है? सूर्य के तांडव और तपिश से तो हमारी न जान निकलती है। इन चीजों से उन्हें कब तबाही होती है? हम अपने लिए कहाँ कभी चिन्तित हुए हैं? उन्हीं की चिन्ता के लिए तो हमारा जनम भी हुआ है। दो ही रास्ते हैं— कुएँ-तालाब में डूब-धँस मरो या कहीं भागकर परदेश चले जाओ।"

उसका छोटा भाई भी अभी तक बकरी चराकर लौटा नहीं था। उसने नाद पर से ही पूछा, "सुबला अभी तक आया कि नहीं?"

"कहाँ आया है?" रेवती अन्दर से ही बोली।

अँधेरा,इसी आँगन में ही क्या, चारों तरफ उतरने लगा था। सुदेव को आज इतना डर क्यों लग रहा है? क्या बाबू के ऊपर भगवान के यहाँ चलने की घड़ी आ पहुँची है क्या? इसी तरह दो-तीन साल पहले भी डरावना लगा था। सुदेव बकरियाँ लेकर इसी नाद पर चुपचाप आकर बैठा था। तभी अकलू चाचा, रमई भगत और जोखू दादा के घर से चीखने-चिल्लाने की आवाज सुनायी पड़ी थी। किसी का बेटा, किसी की मेहरारू घंटे-दो-घंटे के अन्दर चल बसी थी। पूरे टोले में हैजे का भयंकर आक्रमण था। रमई भगत का तो सारा परिवार ही सूना हो गया था। सूखाड़ और बाढ़ की तरह बीमारियाँ भी इसी टोले के लिए होती हैं। सुदेव पूरे टोले में हाहाकार-चीख के मध्य स्वयं भी रोने लगा था। ठीक पंद्रह-बीस दिनों तक एक-न-एक आदमी की लाश बराबर घर से निकलती थी। लोग श्मशान से लौट भी नहीं पाते थे कि एक लाश पड़ी मिलती थी। गजब हालत थी। कोई नहीं कह सकता था इस हैजे की बीमारी में कौन जिन्दा रहेगा और

कौन मरेगा। पूरा टोला मुर्दों के टोला में बदलता जा रहा था। गाँव के कछार एक देवी मैया का देवल था। रमपतिया काकी पर देवी आती थीं। रमपतिया काकी मुट्ठी भर-भरकर नीम की टहनियाँ हाथों से बटोरती थी और झूमती टहनियाँ पटकती सुबह-शाम टोले की परिक्रमा करती रहती या देवल के अन्दर चुपचाप गाती रहती—"निमियां की डालि मइया चढ़ली हिंडोलवा कि झूली, झूल···।" सभी लोग रमपतिया काकी को देखते ही हाथ जोड़कर खड़े हो जाते, मइया देवल से निकलकर गांव-घर का हाल-चाल लेने आयी हैं।···आदमी-जन ही नहीं रहेगा तब तुम किस देवल-मन्दिर में रहोगी हे मइया!···कौन तुम्हें पुआ-पकवान चढ़ायेगा?··· कौन तुम्हारे चरणों में बैठकर गुहार लगायेगा—"निमियां के डारि मइया चढ़ ली हिंडोलवा कि झूली, झूल···।"···बोलती काहे नहीं मइया?··· काहे नहीं बोलती?···रमपतिया काकी पूरे बदन को कँपाने लगती है··· हाथ-पाँव पीटने लगती है···आँखें फाड़-फाड़कर देखने लगती है···लोग बूझ रहे हैं, देवी मइया अभी और गांव-घर खायेगी तब जाकर कहीं उनका मन पूरा होगा।···सचमुच आधा गांव साफ हो गया था। इसके बाद ही उनका कलेजा ठंडाया था।

इस साल भी लगातार घामी पड़ती रही है। आकाश में कहीं बादल का नाम ही नहीं। स्वर्ग में आग लगी हुई है। सावन-भादों के महीने में भी ऐसी तपिश! रात में लू चलती है। दुनिया कहीं उलट तो नहीं रही है? मालिक इतना निर्मोही है कि परती जमीन में हल नहीं लगता तब भी कंधे पर हल उठवा ही देता है। हल का परिहथ घसोड़ते-घसोड़ते छाती में दरद होने लगती है। बैल कहर जाते हैं। अरे, जिसे आदमी के लिए कोई मोह नहीं हो उसे जानवर पर कहाँ से मोह आयेगा? गीता, पुराण, रामायण, कंठी, जात-बिरादरी जिसे आती है वही शक्तिशाली भी है और वही पर-मात्मा का आदमी भी है। सुदेवराम चमार को कौन पूछता है?

धीरे-धीरे अन्धेरा गढ़ाने लगा था। सुदेव नाद पर अभी तक मिट्टी की तरह जमा हुआ था। अगल-बगल के एकाध घरों से धुआँ छप्परों को चीर-कर फैल रहे थे। रेवती ढिबरी जलाकर ओसारे में रख गयी थी। तेल की कमी के कारण ढिबरी थोड़ी देर बाद ही बुझ भी गयी थी। · ९

नाद पर इस प्रकार चिपका क्यों था ? बावू के सिरहाने ही थोड़ी देर बैठ जाता, हाल-चाल पूछ लेता। या टहलते हुए वैद्यजी से ही बावू की बीमारी के बाद में छान-बीन कर आता। परन्तु माई ससुरी पता नहीं कहाँ जाकर मर रही है। माई है कि कसाई ? सुदेव याद करता है, वही जब-तब किसी विपत या तकलीफ में गुहारकर सुदेव पर ही बरसती रहती है और कहती फिरती है, यह मेरा लड़का नहीं, दुश्मन जन्मा है। माई के जिया गाई और पूता के जिया कसाई ! आज तो सुदेव फैसला करके ही छोड़ेगा। इस गाँव में रखा ही क्या है ?...भूख, बीमारी, मालिक, अन्याय—यही सब न ? अब तो सुदेव गाँव छोड़कर परदेश कहीं काम-धन्धा खोजेगा। यहाँ की तकलीफ से मन घबड़ा गया है।

माई आँगन में आकर खड़ी हो गयी थी, लेकिन निविड़ अंधकार और सोच के कारण सुदेव को वह नजर नहीं आ सकी थी। माई अचानक बोली तो सुदेव खाली अचकचाया ही नहीं, गुस्से-से भर भी उठा। "क्या रे कनेआ नैहर से आए आठ दिन हो गए, घर-आंगन का तनिक भी ख्याल नहीं है क्या ? अब नई-नवेली थोड़े है तू। पढ़ाई-लिखाई की अमीरी हमारे बाप-दादों के यहाँ नहीं है। चलाना अपने घर में।"

रेवती कुछ बोली नहीं, आंगन में निकलकर खड़ी हो गयी। "क्या हुआ, ईआजी ?"

"तू घर में ढिबरी जलाने से भी गयी ? कैसी अन्हरिया है ? जैसे मुरघटिया हो !"

"ढिबरी में तेल नहीं है, ईआजी।"

"तब ढिबरी का तेल कौन पी जाता है—मूस, कि तू ही पी जाती है ?"

रेवती कुछ नहीं बोलती। ईआजी ने फिर पूछा, "बुढ़ऊ कैसे हैं ?"

"अभी तो उसी तरह हैं।"

"सुदेउआ, सुबलवा—वे दोनों लौंडे कहाँ मर रहे हैं ? उन्हें क्या फिकिर है कि घर में बाप की क्या हालत है ? मर गया तो घर में कफन भी मुहाल है।"

"कफन की क्या जरूरत है माई।" सुदेव नाद से उतरकर खड़ा हो

गया। "इसके पहले मैं ही गाँव छोड़कर हमेशा के लिए चलता हूँ। अब दो-दो श्राद्ध एक ही साथ कर देना।"

"रोज तू ऐसे ही बोलता है। कहावत है कि कोढ़िया डरावे थूक से।"

बकरी दरवाजे पर कब से मिमिया रही थी। सुबल छोड़कर जाने कब चला गया था। सुदेव बाहर निकलने के लिए दरवाजे की ओर बढ़ गया।

उसकी आत्मा कहती थी कि बाबू अभी नहीं मरेगा। अमीर लोग घंटे-दो-घंटे की बीमारी में ही सुरधामपुर पहुँच जाते हैं। सुदेव के बाप के प्राण इतनी जल्दी नहीं निकलेंगे। माई को ही क्या बाबू की फिकिर है? फिकिर ही होता तो क्या ऐसे घर-घर घूमती-फिरती?

"इतनी देर से गयी कहाँ थी तू?" सुदेव ने चिल्लाकर पूछा।

"शिवजी मालिक के यहाँ गयी थी। उन्होंने ही खबर भेजकर बुलवाया था। और क्या तुम्हारी तरह घूमने गयी थी? घर में मेहरारू आ गई है, तुझे फिकिर-चिन्ता है कुछ?"

"शिवजी मालिक ने किसलिए बुलाया था?"

"आसमान में आग लगी है। सावन-भादों के महीने में ऐसे लू चलती है? सारा बधार ऐंठ रहा है। खाएगा क्या तू—अपने बाप का ठेंगा?"

"उन्हें क्या फिकिर पड़ गयी? उनकी कोठी में तो अभी तक हजारों मन अनाज है।"

"तू कुछ नहीं बूझेगा।" माई ने डाँट दिया, "आज से मुहल्ले की औरतें शिवजी मालिक के द्वार पर हरफरौरी गायेंगी। मैं सबको घर-घर जाकर खबर कर आयी हूँ। जब तक हमारी बात इन्द्रासन तक नहीं पहुँचेगी तब तक बरखा नहीं होगी।"

सुदेव का दिमाग यहीं तड़तड़ाता है—न अपनी जमीन, न अपना घर। आखिर माई को क्या चिन्ता पड़ी है? जिसकी धरती है वह तो चादर तान कर सो रहा है। धरती पर आग बरस रही है। जैसे-जैसे धरती दहकती है हमारा कलेजा—समूचे इस टोले का कलेजा क्यों दहक जाता है? रतनपुर वाले मालिकों को चिन्ता चाहिए थी अब ये सारी औरतें कूद-कूदकर हरफरौरी गायेंगी, चीखेंगी, रात-भर कूदेंगी···रामजी से···इन्द्रासन से पानी माँगेंगी। मालिकों की औरतें इन्हें घोड़ी कहकर मजाक उड़ायेंगी

अपने-अपने मरद की छाती से चिपककर हरफरौरी का मजा लेती रहेंगी।

"जो तुम्हारे मन में आए सो कर। तुमसे तो इन्द्र भगवान की जान-पहचान तक नहीं है। तुम्हारे कहने से वरखा होगी? मैं इस गाँव में अकाल मृत्यु भोगने के लिए बिल्कुल तैयार नहीं हूँ। तू खुश कर रतनपुर के मालिक को। मैं गाँव छोड़कर जा रहा हूँ।"

"तू रोज गाँव छोड़कर जा रहा है? तुम्हारी यही वात सुनते-सुनते तो मेरे कान पक गए हैं।"

माई की बोली बर्दाश्त नहीं हो रही थी।

माई को क्या ऐसा विश्वास है कि सुदेव इस गाँव को छोड़कर नहीं जा सकता? माई की छाती बाबुओं की चिन्ता में रहते-रहते पथरा गयी है। वह बेटे के लिए गंगा की तरह सूख गयी है। निविड़, दमघोटू अँधेरे को चीरते-फाड़ते सुदेव निकल आया और दरवाजे पर बँधी बकरियों से ऐसा टकराया कि एक की सींग से उसकी जांघ से खून आ गया। वह सुबल को बेपर्द गालियाँ बकने लगा। माई जब सुबल का पक्ष लेकर बोलने लगी तो सुदेव का माथा और भी झनझना गया, जैसे जांघ के खून पर किसी ने नमक छिड़क दिया हो।

सुदेव का मुंह भूख से कड़ुआ गया था। पाँव दिन-भर की हलवाही से भरभरा रहे थे। इस पर भी माई का ऐसा व्यवहार होता है कि सौतेली महतारी भी ऐसा नहीं कर सकती। ऐसी हालत में कहीं परदेश में शरण लेना ही अच्छा है। यहाँ गाँव में तो सुदेव के साथ सबका एक ही जैसा व्यवहार होता है। शिवजी मालिक का असर सर्वत्र है—प्रकृति, हवा, पानी सब जगह। सम्भवतः उसकी इस गांव में जरूरत नहीं है।

सुदेव इस जिले से बाहर एक बार बनारस गया था, शिवजी मालिक की ससुराल। अधिक दिन रहने का मौका नहीं था। सुदेव और सुबल दोनों थे। शिवजी मालिक महीने-दो-महीने पर एक बार बनारस जरूर जाते हैं। बनारस में उनका अपना मकान है। ससुराल से अलग तकाजा आता है। फिर भी, शिवजी मालिक की अपनी एक शान तो है ही। जमींदारी चली भी गयी तो क्या हो गया है? अपना संस्कार और अहंकार तो है। सारे ढाँचे का अभी बाल भी बांका नहीं हुआ है। शिवजी मालिक आगे-आगे

मलमल की कमीज और सेनगुप्ता महीन धोती मे मगही पान चबाते हुए झूम-झूमकर चलते थे। पीछे-पीछे सुबल उनकी बन्दूक बायें कंधे मे और दाहिने हाथ में उनका पनबट्टा थामे हुए था और उसके पीछे उनका सूटकेस माथे पर उठाए हुए सुदेव। फिर दस दिन उनकी सेवा-टहल के बाद लौट आया था। बराबर तो बाबू ही उनके साथ जाते हैं। हो सकता है, इस बार जाना पड़े तो फिर सुदेव को ही जाना पड़ेगा।

सुदेव तो परदेस जा रहा है, रानीगंज, झरिया, कलकत्ता—अभी कहां जाना है, कुछ भी नही मालूम। न कोई दिशा-बोध है, न कहीं कोई जानकार। खाली सुदेव भाई के जोर से घर छोड रहा है। हो सकता है, वही कोई अवलम्ब न मिले तो परदेश ही मे डुबकी लगा जाए।

रात में रेवती भरपेट रोयी थी। अभी तो उसके पाँव के महावर मद्धिम भी नहीं पड़े थे। सुदेव के साथ अभी एक रात खुलकर जगी भी नहीं थी। अभी तो इस गाँव में उसकी हालत उस चिड़िया की तरह है जो अपने घोंसले से बाहर नही निकली है।

"तुम सचमुच मे जाओगे ?" रेवती सिसकती हुई पूछती है।

"मैं यहां एक पल के लिए भी नही रहूंगा।"

"कहाँ जाओगे ?"

"रानीगंज, झरिया, कलकत्ता—कही भी।"

रेवती जोर से रोने लगती है। "रास्ता देखा-सुना तो है नही।" कहाँ जाओगे ?" रेवती को घबराहट ठीक उस माँ की तरह होती है जो अपने बच्चे को हमेशा के लिए अबोध ही समझती है।

"सच मानो तो भाई ही इस गाँव मे मेरी असली दुश्मन है। इसी के कारण तो जा रहा हूँ। जैसे शिवजी मालिक हो इसके लिए सब कुछ हों। मैं या बाबू कुछ भी नही हैं।···इस पर भी उधर शहर है। सुनता हूं गाँव की तरह उधर जोर-जुल्म नही है। शिवजी मालिक के लिए हमें, तुम्हे या किसी को भी डकैत, चोर, खूनी कुछ भी बनाकर जेल मे सड़वा देना तो मामूली बात है। मगर वहाँ कोई इतना बड़ा झूठ नही बोलता। तुम तो पढ़ी-लिखी हो, तुम्हें वहा के बारे मे कुछ भी नहीं मालूम क्या ?"

रेवती रोती हुई बोलती हैं, "मैंने तो कलकत्ता छोड़ किसी भी जगह

का नाम नहीं सुना है।"

"मास्साहेब गए थे।"

"कौन मास्साहेब ?"

"वही, जो गाँव में पढ़ाते थे स्कूल में।"

"रतनपुर का यह टोला भी कैसा है कि एक भी आदमी साला यहाँ से कहीं भी बाहर नहीं गया है।" सुदेव को अपने ऊपर गौरव भी हो रहा है।

मगर रेवती की आँखें रात-भर रो-रोकर फूल गयी हैं। सुदेव किसी भी बात को समझने के लिए तैयार नहीं है।

...रेवती का सुदेव सुबह उठकर चल दिया है।...उसका मरद बिदेसिया हो गया है!

२

आँगन में काग बोलता है, ईआ जी। 'वो' जरूर आएँगे। रेवती का मन होता है कि बकरियाँ हाँकती ईआ जी को टोक दे, परन्तु लाज से सकुचा गयी है। क्या सोचेंगी ईआ जी! यही न कि रेवती रात-दिन मरद की चिन्ता में रहती है। अभी सुदेव को गए कितने दिन हुए हैं—यही दस-पन्द्रह दिन। ईआ जी के जार से ही तो 'वो' विदेसी हो गए हैं। नहीं तो उन्हें कुत्ते ने थोड़े काटा था कि वे घर छोड़ दें, गाँव और 'बेकत' छोड़कर विदेसिया कहलाएँ। गाँव में और भी तो सभी लोग हैं। लेकिन, उनका तो विदेस का कोई रास्ता देखा हुआ नहीं है। कहाँ भटकते होंगे, किसी को मालूम है क्या ? भूखे होंगे, प्यासे होंगे—किसे मालूम है। ओसारे में लाल साग चोरती हुई रेवती काग को भर नजर निरखती रह जाती है।

गौना के सात-आठ दिन ही तो बीते थे, 'वो' चले गए—बड़ी दूर... पूरब में रानीगंज, कि झरिया, कि कलकत्ता...कुछ नहीं मालूम! अभी उन्हें भर नजर दिन में देख ही कहाँ पायी थी। याद पारती...ताम्बे का तरह लम्बा...छरहरा, मूरत जैसी सूरत...रेवती से बिसुरती नहीं! हवा

में पता नहीं क्या-क्या फुसफुसाती है। पहली रात वाली बातें…पंक्ति-पंक्ति उसके कानों में चूती है। मनभावन के तीन वरिस की तरह केवल तीन रात। तीन रातें तीन सौ वरिस रातें क्यों नहीं हो गयी थी ? उसका कोई ओर नहीं होता…रात मुश्किल में पड़ जाती। सुबह नहीं होती। सूरज मुँह नहीं काढ़ता।…रेल नहीं आती। 'वो' टीशन से ही लौट आते…!

ईआजी को अब बेटा का ख्याल होता है। आँख के सामने था तो बराबर ताना मारा करती थीं।…सौतेली की तरह गरियाती थी। अब तो आँख में लोर भर लेती है और टोला-पड़ोस में कहती फिरती हैं—गाँव में ही हलवाही मजूरी मिलती तो बाबू परदेस काहे जाते। जाने के पहली वाली रात को 'वे' भी कहने लगे थे, रानीगंज में रिक्सा खींचेंगे, तीन पहिया वाली गाड़ी। उस पर आदमी बैठते हैं—एक, दो, कभी तीन-तीन। और 'वो' बैल की तरह खींचते होंगे। आदमी को चढ़ाकर पालकी में मुसहर-कहार भी तो ढोते हैं।…'वो' गर्मी की इस दहकती लू में भी खींचते होंगे। बरसात के पत्थर-पानी में भी खींचेंगे। अगहन-पूस में देह को छेदने वाले जाड़े में भी खींचेंगे !…

रेल का क्या दोष है !

आदमी से आदमी घिन रखता है।

अटारी पर साँझ को काग बोलता है। अब उनके लौट आने की कौन बेर है। तब भी रेवती का मन करता, काग बोले—पर सगुनराम अच्छा करें। 'वो' जरूर आएँगे…कागा तेरा चोंच सोने की मढ़वा दूँगी…सोने की !

साँझ की हवा कुछ संदेश लाकर कानों के पास छोड़ जाती है। हवा उसे मुखर देती है, गीतों में फुसफुसाती है,

> रेलिया ना वैरी,
> जहजिया ना बैरी
> वैरी पइसवा हो राम…

रेवती के पपनियों पर मोती दाने की तरह आँसू झिर जाते हैं।

…कागा ! तू इतना क्यों चिल्लाता है। माया वह सहन नहीं कर सकती मन की बड़ी कमजोर है। उससे यादें नहीं बिसुरतीं। यह तो व्रत

का नाम नहीं सुना है।"

"मास्साहेब गए थे।"

"कौन मास्साहेब ?"

"वही, जो गाँव में पढ़ाते थे स्कूल में।"

"रतनपुर का यह टोला भी कैसा है कि एक भी आदमी साला यहाँ से कहीं भी बाहर नहीं गया है।" सुदेव को अपने ऊपर गौरव भी हो रहा है।

मगर रेवती की आँखें रात-भर रो-रोकर फूल गयी हैं। सुदेव किसी भी बात को समझने के लिए तैयार नहीं है।

···रेवती का सुदेव सुबह उठकर चल दिया है।···उसका मरद विदेसिया हो गया है!

२

आँगन में काग बोलता है, ईआ जी। 'वो' जरूर आएँगे। रेवती का मन होता है कि बकरियाँ हाँकती ईआ जी को टोक दे, परन्तु लाज से सकुचा गयी है। क्या सोचेंगी ईआ जी! यही न कि रेवती रात-दिन मरद की चिन्ता में रहती है। अभी सुदेव को गए कितने दिन हुए हैं—यही दस-पन्द्रह दिन। ईआ जी के जोर से ही तो 'वो' विदेसी हो गए हैं। नहीं तो उन्हें कुत्ते ने थोड़े काटा था कि वे घर छोड़ दें, गाँव और 'बेकत' छोड़कर विदेसिया कहलाएँ। गाँव में और भी तो सभी लोग हैं। लेकिन, उनका तो विदेस का कोई रास्ता देखा हुआ नहीं है। कहाँ भटकते होंगे, किसी को मालूम है क्या ? भूखे होंगे, प्यासे होंगे—किसे मालूम है। ओसारे में लाल साग चीरती हुई रेवती काग को भर नजर निरखती रह जाती है।

गौना के सात-आठ दिन ही तो बीते थे, 'वो' चले गए—बड़ी दूर··· पूरब में रानीगंज, कि झरिया, कि कलकत्ता···कुछ नहीं मालूम! अभी उन्हें भर नजर दिन में देख ही कहाँ पायी थी। याद पारती···ताम्बे का तरह लम्बा···छरहरा, मूरत जैसी सूरत···रेवती से बिसुरती नहीं! हवा

में पता नहीं क्या-क्या फुसफुसाती है। पहली रात वाली बातें···पंक्ति-पंक्ति उसके कानों में चूती है। मनभावन के तीन बरिस की तरह केवल तीन रात। तीन रातें तीन सौ बरिस रातें क्यों नहीं हो गयी थी ? उसका कोई और नहीं होता···रात मुश्किल में पड़ जाती। सुबह नहीं होती। सूरज मुँह नहीं काढ़ता।···रेल नहीं आती। 'वो' टीशन से ही लौट आते···!

ईआजी को अब बेटा का ख्याल होता है। आँख के सामने था तो बराबर ताना मारा करती थीं।···सौतेली की तरह गरियाती थीं। अब तो आँख मे लोर भर लेती हैं और टोला-पड़ोस में कहती फिरती हैं—गाँव में ही हलवाही मजूरी मिलती तो बाबू परदेस काहे जाते। जाने के पहली वाली रात को 'वे' भी कहने लगे थे, रानीगंज में रिक्शा खींचेंगे, तीन पहिया वाली गाड़ी। उस पर आदमी बैठते हैं—एक, दो, कभी तीन-तीन। और 'वो' बैल की तरह खींचते होंगे। आदमी को चढ़ाकर पालकी मे मुसहर-कहार भी तो ढोते हैं।···'वो' गर्मी की इस दहकती लू में भी खींचते होंगे। बरसात के पत्थर-पानी में भी खींचेंगे। अगहन-पूस में देह को छेदने वाले जाड़े में भी खींचेंगे !···

रेल का क्या दोष है !

आदमी से आदमी घिन रखता है।

अटारी पर साँझ को काग बोलता है। अब उनके लौट आने की कौन बेर है। तब भी रेवती का मन करता, काग बोले—पर सगुनराम अच्छा करें। 'वो' जरूर आएँगे···कागा तेरा चोंच सोने की मढ़वा दूँगी···सोने की !

साँझ की हवा कुछ संदेश लाकर कानों के पास छोड़ जाती है। हवा उसे खबर देती है, गीतों में फुसफुसाती है,

> रेलिया ना बैरी,
> जहजिया ना बैरी
> बैरी पइसवा हो राम···

रेवती के पपनियों पर मोती दाने की तरह आँसू तिर जाते हैं।

···कागा ! तू इतना क्यों चिल्लाता है। माया वह सहन नहीं कर सकती मन की बड़ी कमजोर है। उससे यादें नहीं बिसुरती। यह तो बता

कि 'वो' किस तरह हैं···कहाँ हैं, निरोग तो हैं न ! देह तो वैसी ही है न ! जब से गए हैं बिदेसिया मेरे, कोई खबर-संदेश नहीं । चिट्ठी-पत्री क्यों नहीं आयी ! क्या कहकर गए थे। जाते ही भेजूंगा । हे राम ! मेरे बिदेसिया जरूर अच्छे होंगे न !···जरूर अच्छे होंगे !···निरोग होंगे !

गोदावरी आग लेने आयी थी। रेवती अभी भी साग चोर रही थी, यादों की माया में बौरायी फिर रही थी। गोदावरी टोकती है, "हाय भौजी। अँचरा के कोर से लोर काहे पोंछती हो ? मन ससुराल में भइया के बिना नहीं लगता न ! माई याद पड़ती होगी। नैहर भाया है क्या ?"

रेवती लजाती है। मोटे-मोटे, भरे-भरे न चाहते हुए भी कई मोती दाने झलक आते हैं।

"माई किसे याद नहीं पड़ती, गोदा !"

गाँव, गलियाँ, अकेलहा आम, सहेलियाँ···मोती···और सब रेवती के 'वो'—कई एक साथ आँख, मन और दिमाग चक्कर काटते रहते हैं। सुदेव की याद तो बहुत रुलाती है। रह-रहकर अकेले में छाती फाड़ती रहती है।

नैहर में गंगा के किनारे बालू के टोले···घरौंदे कुछ ही दिनों पहले तो छूटे हैं। पीपल के टीले वाली बचपन की सहेलियाँ। चरवाही में तकरार करता हुआ मोती ।···आम के टिकोरे।···अष्टमी-एकादशी के दिन सावनी स्नान ।···भाई-भौजाई···और चरवाही में मोती के साथ आँख-मिचौनी···। मोती के साथ अकसरहाँ तकरार हो जाती थी तो वह तालियाँ पीट-पीटकर मोती को चिढ़ाने लगती थी—"बेटिया में बेटवा गुलेल खेलेला। भर मुट्ठी सेनुरा जिआन करेला।" (बेटियों के साथ बेटे खेल-खेलकर भर-भर मुट्ठी सिन्दूर बर्बाद कर दे रहे हैं।) भोले-भाले गीत···सब कुछ तो रेवती को एकान्त में बेधते हैं। यादों के पंछी बीच-बीच में अपने गाँव उड़ जाते हैं।

"पतोहू काहे रोती है, गोदा ?" ईआ जी गोदावरी से रेवती के बारे में पूछती हैं।

यादों के पंछी जैसे बहेलिया के अचानक तीर खाकर गिरते हैं।

ईआ जी समझाती हैं, "माई-बाप को कब तक याद करोगी, कनेआ । आँगन में कई दिन से काग बोल रहा है। तुम्हारे नैहर से खोज-खबर, के

लिए तुम्हारा भाई-भतीजा भी तो नहीं आता। कोई तकलीफ है क्या ?"

"क्या कहती हैं ईआ जी, तकलीफ की बात। रामजी ने मुझे सब कुछ तो दिया है। आप भी मेरी सगी माई से कम हैं क्या ?" रेवती अपने आंसू प्रकट करना नहीं चाहती।

"तब अकेले में रोती काहे रहती है, कनेआ ?"

"कैसे कहूँ व्यथा, ईआ जी !"

रेवती ओसारे से उठकर ढिबरी जलाने लगती है।

आधी रात बीत गयी है। रेवती को नींद नहीं आती। वह सगुन-अप-सगुन विचारती है। भाई मइया, गंगा के किनारे-किनारे···गाँव की सभी सहेलियाँ···मोती···और 'वे' भी। रेवती अपने गाँव अकेलहा आम के नीचे बैठकर डोली लेकर गुजरने वाले कहारों को अपनी सहेलियों के साथ चिढ़ाया करती थी—कनेआ जाली भूइयें-भूइयें, मार लइके ढुइयें-ढुइयें।" (डोली की कन्या भूमि-भूमि चल रही है। ए लड़को ! इसे ढुइयां फेंककर मारो।) रेवती की डोली भी जब गाँव से इसी तरह गुजरी थी और रतन-पुर के इस टोले के पिछवाड़े डोली मुमहरों ने रखी थी तो यहां की बेटियों ने भी यही चिल्लाना शुरू किया था, 'कनेआ अइली भूइयें-भूइयें, मार लइके ढुइयें-ढुइयें।' (कन्या हमारे गाँव भूमि-भूमि आयी है। ए लड़कों, इसे ढुइयां फेंककर मारो।) रेवती का भाई डोली के पास खड़ा था। कुँआरी लड़कियों ने उसके भाई को देखकर कहना शुरू कर दिया। 'कनेआ हो, दुगो धनियां द। लाल मिरचाई के फोरन द। भाई आउल भेंट कर।' (एक कन्या, दो धनिया की पत्तियां और लाल मिर्च छौंक के लिए दो। तुम्हारा भाई आया है उससे मुलाकात कर लो।) मोती जरूर चरवाही में अकेला होगा, रोता होगा। वह तो उससे वायदा कर आयी थी, रेवती उसके व्याह में अपने हाथों मंगल कलश रखेगी, झूमर गाएगी, उसकी कनेआ उतारेगी···सखी बाँधेगी, क्योंकि मोती को उसी तरह नहीं भुलाया जा सकता, जिस तरह गाँव की गलियां नहीं बिसुरतीं।···बिदाई की रात वह मोती के साथ भरपेट रोयी थी। मोती ने कहा था, अगर मेरा मोह सच्चा होगा न रेवती, तो वह खींचकर तुम्हें जरूर गाँव लाएगा। तुम्हारे बिना तो जोन्हरिया के दाने सूख जाएँगे। सावन के पहले जरूर आ जाना।

मैं वहाँ अकेलहा आम के नीचे टीले पर तुम्हारा इन्तजार करूँगा। रोज-रोज की तरह मोती अब भी वहीं बैठा होगा। मोती ने रेवती को ठीक ही तो समझाया था—रेवती की ससुराल आने पर मोती को लोग क्या कहेंगे भला। मोती न उसका भाई होता है, न भतीजा। वह न कोई पाहुन ही है, न बहनोई। रेवती की ससुराल वालों के सामने जग हँसाई होती।

मोती नीम के नीचे बैठा-बैठा रोया करता। रेवती के आँगन में गीत होते, लगन के गीत होते,

"पहिला लगनियाँ तिल चाउर, ओही में डँटावल पान।"

पहिला लगनवाँ तिल चाउर ए ऽ ऽ···

लगनियाँ बाड़ा सुनर, सगुनवाँ अकुलाइल एऽऽ···

मोती से ज्यादा तो अब वही याद आते हैं। आज यादों के तार इतने झनझनाते क्यों हैं?

"ईआ जी, मुझे नींद नहीं आती ईआ जी! ···नींद नहीं आती।" रेवती अचानक चिल्लाती है।

"तुम्हें क्या हो गया है, कनेआ?" ईआ जी चिहुंककर पूछती हैं।"

"ऐसी बात नहीं, ईआजी 'वो' जरूर आएँगे। सुबह होते-होते जरूर आ जाएँगे। काग मुझे सगुन बता गया है।"

"सो जा कनेआ! बाबू क्या आएँगे। बाबू तो इस सर्दी में भी रिक्शा खींचते होंगे।"

"उनके तन पर चादर होगी न, ईआ जी?"

"कौन ठीक, बाबू के पास पैसे होंगे।" कहते-कहते ईआ जी का कंठ भर आता है। ईआ जी सोचने लग जाती हैं···अपने बाबू भी तो सर्दी में भीगते होंगे।···तन पर चादर नहीं होगी, कनेआ ठीक ही कहती है। अगहन-पूस की सनसनाती बयार शरीर को भाले की तरह छेदती होगी। रिक्शे पर कई बैठे होंगे—एक, दो, तीन चार और पाँच भी। हाय दइब! पेट कैसा मुदई है, दुश्मन है। मुहल्ले-टोले में इस सर्दी में सबके बाबू हैं, केवल मेरे ही बाबू परदेस हैं। जिस विधि राखें राम उसी विधि आदमी को रहना है। दइब के चक्कर में आदमी पिसाता है, ईख की तरह। रो-छछन-कर सबुर करना है···।"

"एक राजा को चार बेटे। सुनती है न, कनेआ ?" ईआ जी उसे और स्वयं को भी बहलाने की कोशिश करती हैं।"

"हूँ, ईआ जी !" रेवती अन्यमनस्क-सा उत्तर देती है।

ईआजी आगे कहती हैं, "राजा ने मना किया, सुनो बेटो ! सभी दिशा में जाना, परन्तु दक्खिन की ओर कभी मत जाना। सो छोटे बेटे ने सोचा, आखिर दक्खिन की ओर क्या बात है जो बाप जान से मना किया है। मैं तो दक्खिन की तरफ ही जाऊँगा। इस तरह बड़ा गया पूरब, मँझोला गया पच्छिम, और संझोला उत्तर। छोटा बेटा जान-बूझकर दक्खिन दिशा की ओर ही चल पड़ा।"

रेवती फिर हुंकार भरती है, "हूँ। तब रानीगंज किधर है ईआजी ?"

"यहाँ से पूरब। अच्छा, आगे सुन, कनेआ !"

"कहो, ईआजी।"

"अब समझो कि चलते-चलते राजा का छोटा बेटा एक घने जंगल में पहुँच गया। वहाँ पहुँचते-पहुँचते रात हो गयी। राजा का छोटा बेटा बहुत थक गया था। इसलिए अपना अँगोछा बिछाकर वहीं सो गया। सो समझना कनेआ कि उसी जंगल में एक बड़ा भारी दैत्य रहता था। सुबह हुई तो क्या देखता है कि वह भारी दैत्य उसे हथेली पर उठाए अपनी माँद की ओर चला जा रहा है।"

"हूँ !" रेवती हुंकारी भरती है।

"जैसे ही दैत्य ने उसे निगलने के लिए मुँह को फाड़ा वैसे ही राजा के छोटे-बेटे ने हाथ जोड़ लिया, ए जंगल के राजा। मुझे बहुत जोरों से भूख लगी है। पहले मुझे खिला दे तब मुझे निगल जाना। इस बात पर दैत्य का कालेजा पसीज गया…"

रेवती ने बीच में ही टोक दिया, "अच्छा, ईआ जी। उन्हें भी भूख लगती होगी तो रिक्शे का मालिक खाने के लिए पूछता होगा न ?"

"कौन ठीक है, उस दैत्य की तरह भलामानस होगा। तब न ? बाबू बीमार पड़ते होंगे तो दवा करता होगा, नहीं करता होगा—कौन जानता है।"

रेवती ऐसी आशंका से डर जाती है। बात को उलटने के लिए बोलती

है, "अच्छा आगे बोलो, ईआजी। राजा के बेटे का फिर क्या हुआ ?"

"सो समझना कनेआ, जो दैत्य ने इस पर जवाब दिया—ए मानुख बच्चा ! मेरे पास मानुख बच्चे को खिलाने के लिए कुछ भी नहीं है। इस जंगल के पास ही एक बस्ती है—अंधेर नगरी। वहीं डोमनी रानी राज करती है। वहाँ जाने के बाद तुम्हें रसोई मिल जाएगी। लेकिन हाँ, डोमनी बहुत खूबसूरत मेहरारू है। उसने बड़े-बड़े राजा-महाराजाओं को कैद कर रखा है। उसकी शर्त यह है कि उसके दाएं हाथ के कंगन का जोड़ा जो कोई ला देगा डोमनी उसी के साथ ब्याह करेगी। सो भइया, तुम मेहरारू के चक्कर में डोमनी रानी के महल की ओर मत बढ़ना, नहीं तो हार दावकर तुम्हें भी डोमनी का कैदी बनना पड़ेगा। राजा का छोटा बेटा बोला, कुछ भी कहो। मगर मुझे तो भूख लगी है। पेट को अन्न तो मिलना ही चाहिए। तब दैत्य ने कहा कि ठीक है। पेट भरते ही तुम मेरे पास आ जाना। सो समझना कनेआ, कि अंधेर नगरी पहुँचते ही राजा का छोटा बेटा क्या देखता है कि जो जैसे बैठा है तो बैठा ही है। खड़ा है तो खड़ा ही है। यानी उसे टकटकेपुर बाजार कहा जाता था। जिस समय डोमनी रानी महल में होती उस समय तो सभी जिन्दा होते और अपना-अपना काम-धन्धा करते होते, परन्तु जहाँ वह इन्द्रासन गयी वहीं सारे लोग काठ की तरह जड़ हो जाते।"

रेवती पूछती है, "अच्छा, ईआजी। डोमनी रानी इन्द्रासन क्यों जाती थी ?"

"अरे वह तो इन्द्र महाराज से फँस गयी थी न ! इसलिए साल में छः महीने यहाँ होती थी और छः महीने इन्द्रासन में सेज पर।"

रेवती सोचने लगती है, घर में 'वो' तो छः दिन भी उसके साथ सेज पर नहीं रहे। लेकिन इन्दर के पास तो बहुत पैसे हैं, वह अमीर है, देवता-पित्तर है। 'वे' तो मामूली आदमी हैं। मजूरिन के बेटे, गरीबिन के बेटे ! छोटे आदमी के बेटे ! कितना भेद है !

तभी ईआ जी टोकती हैं, "सो तो नहीं रही है कनेआ ?"

रेवती कहती है, "मुझे तो बड़ा मजेदार किस्सा लग रहा है। ईआजी।"

ईआजी आगे कहना शुरू करती हैं, "राजा का बेटा नगर में प्रवेश

करते ही सबसे पहले एक दूकान पर गया और अंगोछा बन्धक रखकर भर-पेट भोजन किया। दूसरे दिन वह खूब तड़के डोमनी रानी के महल के फाटक पर पहुंचा।"

"किसलिए, ईआजी ?"

"आगे सुन तो ! राजा के छोटे बेटे के मन तो डोमनी एकदम समा गयी थी। उसने मन में ठान लिया था कि चाहे जो हो, मगर डोमनी के साथ वह जरूर ब्याह करेगा। सो समझना कनेग्रा, कि महल के फाटक पर पहुँचते ही उसने नगाड़ा पीटना शुरू किया। नगाड़ा बजना था कि पटरानी महल मे हाजिर। वह बोली, ऐ नौजवान ! अगर कंगन का जोड़ा नहीं मिला तो जिन्दगी भर के लिए मेरे कैदखाने में रहना पड़ेगा। राजा के छोटे बेटे ने सिर झुकाकर डोमनी रानी की शर्त को मंजूर कर लिया।"

रेवती फिर विचार करती है, राजा के छोटे बेटे ने कितना बड़ा खतरा उठाया है डोमनी रानी के लिए। उसके 'वे' भी तो इतना ही बड़ा खतरा उठाकर गए हैं पेट के लिए। उन्हें किसी सौतिन या औरत से क्या मतलब है। राजा के छोटे बेटे की तरह इश्कबाज थोड़े हैं। 'वे' ऐसा छोटा काम कभी नहीं कर सकते। राजा के छोटे बेटे की नीयत की तरह गरीब आदमी कभी नहीं होता। नैहर मे भौजाइयां ठीक ही तो गाती हैं।

रेलिया न बैरी,
जहजिया न बैरी,
बैरी पइसवा हो रामः...।

ईआजी की तरह रेवती के नैहर में भी गांव की बहू-बेटियां सभी मिलकर जगत साव के कुएं पर इन्द्र को मनाने के लिए गीत गाती थी, आज भी बैठकर इन्द्र से पानी मांगती होंगी। इसी फागुन में मोती का ब्याह जरूर हो जाएगा। बाप रे ! कितना निर्दय है जगत साव। सेर भर सतुआ के लिए दिन भर घाम में पीस दिया था मोती को। दैत्य की तरह खटता रह गया था मोती। कोई क्या कर सकता था। बरखा का विश्वास ही उठ गया था। गांव मे दो-चार को छोड़कर सभी मौत के कगार पर थे। मोती की महतारी, छोटा भाई ! तीन दिनों के भूखे ! क्या इस दैत्य से कम भयंकर जगत साव है ? कुदाल धरती माई में धंसाकर थक जाता था मोती।

नख से लेकर शिख तक तवे की तरह लहक जाता। फिर भी कुदाल को धरती में इतना धंसाता, मानो दो भागों में फाड़ देगा। कसाई भी इतना क्या निर्दय होगा, जिस तरह मोती पपड़ियों वाली धरती के साथ हो जाता था। आखिर यह सब किसके लिए ? इस मुदई पेट के लिए ही तो लेकिन इन्दर तो अहेरी है आदमी का। इसीलिए मोती धरती में जगह बनाते-बनाते थक गया था। कहीं शरण नहीं मिली थी।

बाबूचक रेवती के गाँव से पाँच कोस पर कगछूंछ मालिकों की बस्ती। एक बार मोती उसी रास्ते से गुजरा था। किसी को सलाम करना भूल गया था। कन्धे से कुदाल उतारकर मोती बाबूचक के एक मालिक के पायदाने धम से गिर गया, अब तो बरखा का कोई आसरा नहीं, मालिक ! सारे बधार में आग लपलपा रही है।

वह मालिक उसे भद्दी गालियाँ देते हुए ठठाकर हंसा था। नाद पर झूम-झूमकर गवत खाते हुए बैल भी उस दैत्याकार ठहाके से चिहुंक उठे थे। रेवती से मोती ने सब कुछ बताया था। ईसा जी की कहानी का दैत्य बाबूचक के मालिकों से कहाँ खूंख्वार है ? यहाँ के शिवजी मालिक का नाम ईसा जी के मुंह से सुनती है। यह भी तो बाबूचक वालों के करेज की तरह का ही खूंख्वार लगता है। खाली शिवजी मालिक के बारे में रेवती गोदावरी के मुंह से जब तक सुनती है कि देखने-सुनने में बड़ा सुघड़, सुभेख जवान है।···मगर आग लगे ऐसे दैत्याकार जवानी में। कहीं रानीगंज में भी 'उनके' रिक्शे का मालिक भी शिवजी मालिक की तरह का ही दैत्य हो तब ? अभी उनकी उम्र ही क्या होगी—अट्ठारह-बीस ! बस यही न ! अट्ठारह बरिस की इस उमिर में तीन-चार आदमियों को रिक्शा में बैठाकर खींचते होंगे। कहीं वह आदमी भी जगत साव या शिवजी मालिक निकल गया तो ? वे लोग तो 'उन्हें' भाड़ा भी नहीं देते होंगे। दो थप्पड़ मारकर, ठहाका लगाते हुए निकल जाते होंगे।

'वो' जब चिट्ठी-पत्री देने के लिए बोल गए थे तो जरूर भेजते होंगे। डाकखाने से चिट्ठियाँ दुश्मन गायब कर देते होंगे।···परन्तु सुदेव और रेवती की चिट्ठियों से किसी को क्या बैर हो सकता है ! कई बार हिम्मत कर चुकी है कि डाक मुंशी बाबू से पूछे, पर संकोच कर जाती है। चिट्ठियाँ होतीं तो

वह देता क्यों नहीं ?

ईआ जी को वह हिलाती-डुलाती है तो उन्हें जम्हाई आ रही है। बीच में उसे भी ख्याल नहीं रहा कि ईआ जी को नींद आ रही है। वह भी गजब है कि अनाप-शनाप सोचने लगी थी और कहानी के बीच-बीच में इधर-उधर भटक जाती थी। वह ईआ जी को झकझोरकर जगाती है, "अधूरी कहानी छोड़कर सो रही हैं क्या ऐ ईआ जी ? राजा के बेटे और डोमनी रानी का क्या हुआ ? क्या राजा के बेटे ने रानी के कंगन का जोड़ा लगाया ?"

ईआ जी बुदबुदाती हैं, "हुं ' हुं'''जरूर लगा दिया होगा, कनेआ। परन्तु मुझे तो नींद आ रही है। बाकी कहानी कल रात में सुनाऊंगी। मुझे अभी छोड़ दे'''।"

"अच्छा, ईआ जी ! आप तो सो रही हैं, लेकिन मुझे तो आपकी इस अधूरी कहानी के चलते बिल्कुल नींद नहीं आ रही है।"

रेवती की आँखें सचमुच अंधेरे में खुली हुई हैं। चाहती भी है, तब भी नींद नहीं आ रही है।

३

'''जैसे रात्रि सम्पूर्ण गाँव को दैत्य की तरह निगल गयी हो, कहीं कोई आवाज नहीं। टोले को बहिरा साँप ने सूंघ लिया है। दक्खिन की ओर सियारिन फेंकरती है। भयानक अकाल पड़ेगा या बरसा में पूरा टोला बह जाएगा, कौन जानता है।

अचानक रेवती चीखती है और ईआ जी को कस लेती है। "बड़ा भयानक सपना था, ईआ जी। 'वे' पहचान में नहीं आ रहे थे। दांत निकल आए हैं। आँखें धंस गयी हैं। खाली बोली उनकी है, सारा शरीर राकस का। हाय ईआ जी, मैं कैसे जीऊंगी'''। 'वो' मुझे अब पहले की तरह कहाँ मिलेंगे'''कहाँ मिलेंगे'''ईआ जी !"

ईआ जी, गोदावरी की महतारी को बुलाती हैं। "देख रे गोदवा की

माई, मेरी कनेआ को क्या हो गया है ? खराव-खराव सपनाती है। बिछोह कर रोती है।"

"कनेआ को भूत-परेत का आँगछ है। किसी ओझा-गुनी को बुलाकर दिखलाओ।" गोदावरी की महतारी राय देती है।

"इस अंधेरी रात में किस दुआर जाऊँ ?"

"पिलवा मुसहर बड़ा अच्छा गुनी निकला है।"

ईआ जी माथा ठोक लेती हैं। "हाय रे करम ! आधी रात में मुसहर टोली कैसे जाऊँ ? बगीचा पार कर जाना है। बाबू रहते तो बेखटक अभी दौड़ जाते। कनेआ ऐसे थोड़े छछनती ?"

अभी-अभी तो कनेआ को ईआ जी डोमनी रानी का क़िस्सा सुना रही थीं। तनिक आँख लग गयी थी। इसी बीच कनेआ सपने में चीखने लगी थी।

इधर रेवती सोच रही है, उनकी बातों को याद कर रही है।

—सुबल के भइया, क्या भरोसा, उधर तुम कोई सौतिन रख लो।

—जिसके रूप को ताकते ही गेहूं के बाल झूमते हों, सरसों के फूल लजा जाते हैं, उसके मरद को सौतिन की क्या जरूरत है।

"चल सुबल की महतारी, ले चल कनेआ को। मैं भी चलती हूँ पिलवा मुसहर के पास।" गोदावरी की महतारी बोलती है।

रेवती छटपटाकर उठ जाती है। "नहीं, नहीं···। मुझे कुछ भी नहीं हुआ है। खाली 'वो' ही तो मेरे दिल-दिमाग में समाए रहते हैं। यही लगता है कि कहीं से आ रहे हैं। बधार, आरी, डगर, आहट, सोहनी, कोढ़नी, चाहे जाँतसारी हर बेर तो 'वो' ही छाए रहते हैं। भूत-परेत आप लोगों के दिमाग में है, ईआ जी।···मुझे तो कुछ नहीं है ! कुछ नहीं···।"

रेवती बोलते-बोलते कै करने के लिए 'ओय-ओय' करने लगती है। गोदावरी की महतारी अँधेरे में हँसती है, "अरे मिठाई खिलाव सुबल की महतारी। सुदेव बहू को दूसरी देह है। पेट में बच्चा है।"

"मुझे भी तो यही लगता है।" ईआ जी खुशी-खुशी कहती हैं, "अच्छा हुआ कि आठ ही दिन में कनेआ का पेट रह गया है। नहीं तो जुग-दुनिया कितनी खराब है। कनेआ पर किसी की बुरी नजर ही पड़ जाती। हम

गरीब लोगों का परमात्मा भी कहां रखवाला रह गया है। उस दिन तो शिवजी मालिक के खेत पर कनेआ को भी गेहूँ की कटनी में ले गयी थी। मालिक का लड़का शहर से आया था और कनेआ के सामने ही आरी पर जाकर बैठ गया था। अगर कोई कुछ कर ही दे तो हम लोग क्या कर सकते हैं।"

"गरीब की बेटी-बहू को सुन्दर नहीं होना चाहिए, सुबल की माई।"

रेवती से बर्दाश्त नहीं होता है। "उसी हँसुआ से उसकी आंख नहीं निकाल लेती ईआ जी!" वह दांत किटकिटाती है।

'चुप्प!" ईआ जी डांटती हैं, "ऐसी खराब बोली मुंह से नहीं काढ़ते, हवा के भी कान होते हैं।"

रेवती परसों ईआ जी के साथ कटनी में गयी थी तो कहाँ वह शिवजी मालिक का लड़का ध्यान में था। ध्यान में 'वो' थे कि कहीं से अचानक आ जाते तो कितना अच्छा था। कभी उचककर देखती, कभी डगर की ओर लपककर दौड़ जाती। 'वो' रानीगंज से जल्दी ही लौटेंगे, यही तो रेवती का अदम्य विश्वास था। मगन होकर कटनी कर रही थी, गेहूँ की बालियों में तेज धार थी। *उसके बाएँ हाथ का अँगूठा हँसुओं से लग भी गया।* मजूर के हर जगह खून ही तो बहते हैं। उन्हीं के खून से तो नए पौधे अँकुरते हैं। हँसुए के धार को उसने छूकर देखा था। धार मोथर हो चली थी। बड़ी मुश्किल से डंठल कटते थे। चेहरे पर पसीना छलछला आया था। पसीना पोंछने के बहाने वह बार-बार खड़ी हो जाती और डगर की ओर झांकने लगती। शायद···! ···वे कहीं से टपकने वाले हैं।

रेवती जब स्कूल में पढ़ती थी, मास्साहेब जी कभी-कभी कहा करते थे, जमीन उसी की रहेगी जो जोते-बोएगा। गरीब के बच्चे सुनकर बहुत खुश होते थे, उनके बाप के पास भी जमीन हो जाएगी। परन्तु नैहर का साव तो जमीन बँटाई पर देता था। साव का बेटा सूरजमल शहर में सोना-चाँदी का कारोबार करता था। जगत साव गाँव पर खेती कराता था और सूद पर रुपए चलाता था। बाबूचक वाले बाबुओं के बीच जगत साव की कद्र थी। वह जब-तब उन्हें रुपए भी देता रहता था और उनसे सूद नहीं लेता था। लेता भी था तो बहुत कम, नाममात्र के लिए। मास्साहेब जी यह

भी कहा करते थे, हम लोग आजाद हैं। इसका मतलब रेवती धीरे-धीरे ख्याल करती है।···अपने राज में कोई किसी पर जोर-जुल्म नहीं करेगा। पैसे वाले साव-महाजन और बाबू लोग ही मिल-जुलकर दुनिया को बनाते-बिगाड़ते रहे हैं। हरिजन टोली में स्कूल खुला था तो जगत साव जल-भुन गया था। लड़कियाँ स्कूल में आने लगीं तब तो उसे और भी बर्दाश्त करना मुश्किल था।···मगर एक चीज जरूर थी, रेवती के इलाके में जुलुम के खिलाफ बड़ा जोर था। इसलिए किसी का भी जोर-जुलुम बहुत मुश्किल से चल पाता था। जगत साव सीमा लाँघकर आगे बढ़ने की हिम्मत नहीं करता था। रेवती का चाचा देवकीदास पार्टी में था। पार्टी का अखबार आता था। रेवती को अखबार पढ़ने, चाचा की बातें सुनने और बहस करने की आदत बन गयी थी। ससुराल में तो सब कुछ उल्टा-उल्टा ही है। इस इलाके में तो साहस मरा हुआ है। शिवजी मालिकों का यह इलाका गजब का मुर्दा है।

पलटू दादा की दालान पर औरत-मर्द की हर रविवार को भीड़ लगती थी। पलटू दादा मस्त होकर सुनाते थे—जात-पात पूछे ना कोई, हरि को भजे सो हरि के होई।···यही कारण है कि रेवती भिखारी ठाकुर, राहुल, कबीर, पार्टी को ही नहीं, जुल्म को भी पहचानती है। यहाँ आकर रेवती का साहस टूट गया था। मर्द अनपढ़ था तब भी चिन्ता की बात नहीं थी। उसे तो रेवती अक्षर सिखलाकर कबीर, राहुल और पार्टी के बारे में बता सकती थी, परन्तु अपने रत्न-धन तो रेवती के आते ही विदेशिया बन गए हैं। पढ़े-लिखे होते तो चिट्ठी-पत्री देते न! मगर पढ़ने-लिखने से भी क्या हो जाता है। फुर्सत नहीं मिलती होगी तभी तो चिट्ठी-पत्री नहीं दे रहे हैं। देवकी चाचा कहते हैं कि शहर में मजदूरों का संगठन है। तब क्या रेवती के 'वो' भी उस संगठन में होंगे? संगठन में होंगे तब तो चिन्ता की कोई बात नहीं है। रेवती की तरह वह भी मजबूत होंगे।

मगर यहाँ ससुराल में तो मजबूती कोई काम नहीं करती। ईआ जी को अभी भी भूत-परेत का आँगछ ही लगता है और शिवजी मालिक परमात्मा है। ऐसे परमात्मा में तो रेवती के इलाके में लोग आग देते।

"बचा के रहना, कनेआ?" बहुत देर बाद ईआ जी बोलती हैं।

"क्या बात है, ईआ जी ?"

"कोई बात नहीं है ? पेट में लड़का रह गया है, बाबू की निशानी !"

"बाबू की निशानी ! तुम तो ऐसे कह रही हो जैसे 'वो' फिर कभी लौटकर नहीं आएँगे।"

"लौटकर तो आएँगे ही···। पता नहीं, बाबू कब तक आएँगे !"

हवा का हहास बाँधे झोंका। बदन सिहर उठता है जैसे कोई सूई चुभो रहा हो। ईआ जी आंगन में गोदावरी की महतारी के साथ चली आयी हैं। एक पहर और रात टल गयी है। वे शायद सुबह की प्रतीक्षा तो नहीं कर रही हैं !

सचमुच, गोदावरी की माई के साथ ईआ जी पिलवा मुसहर के यहाँ जा रही है। रेवती नाक-भौं सिकोड़ती है, कैसी ढोंगी हैं ईआ जी। भला, इस हालत में पिलवा मुसहर क्या करेगा ? रेवती हजार मना करती रह जाती है, ईआ जी कहाँ मानती हैं। बगल के घर से परमा के खाँसने की आवाज आती है। ईआ जी गोदावरी की मतारी से कह रही हैं, "बुढ़वा न मरता है, न जीता है। महीनों से घर को परेशान किए रहता है।"

"इसमें बाबू जी का दोष ही क्या है, ईआ जी ?" रेवती वहीं से बोलती है।

"चुपचाप रह, कनेआ। पिलवा आया तो तुम्हारे ससुर को भी दिखला देंगे।"

रेवती बहुत समझाती रही, मगर वे दोनों पिलवा मुसहर के पास चली गई हैं। वह झुँझला-झुँझला कर हाथ-पाँव पटकती रहती है और फिर चुप लगा जाती है। बुढ़ऊ भोर में ज्यादा खाँसते हैं।

फिर वही हहास बाँधे हवा का झोंका। बदन सिहर उठता है। रेवती को ख्याल आता है···। पलटू दादा को दालान पर लोग जमा थे और ऐसी अँधेरी रात में वह पलटू दादा की दालान से जगत साव के घर की ओर से लौट रही थी। उसका बेटा आया था। वह छत पर बैठा था और नीचे बिजली की बत्ती में देख रहा था। रेवती पर आँख गई तो धड़धड़ाकर नीचे उतर आया। जैसे बाज की तरह काफी देर से उसी की प्रतीक्षा में हो। उसने आते ही रेवती का हाथ पकड़ लिया था और घर में अन्दर खींच

रहा था। रेवती उसे गालियाँ बकते हुए जोर-जोर से चिल्लाने लगी थी। काफी लोग जमा हो गए थे और चमरटोली के लोग उसके घर में घुसकर साव के बेटे की मरम्मत करने लगे थे। देवकी चाचा ने बीच-बिचाव किया था तब जाकर जगत साव के बेटे की जान बची थी। तभी से वह फिर कभी गाँव लौटकर नहीं आया था। उसी समय से रेवती का मन बढ़ा हुआ है। ऐसे लोगों को अकेले में भी देखने की हिम्मत रखती है। पर यों तो शिवजी मालिक के बेटे को भी दिखला देगी। मगर साले की हिम्मत नहीं हुई।

···फिर भी रेवती घर से बाहर निकलने लगी है। सोहनी-कोढ़नी, घास-पात, मिहनत-मजूरी के लिए बाहर आती है। इसके बिना गुँजाइश ही कहाँ है? घर में बूढ़ा ससुर बीमार है।···बाहर इज्जत-पानी पर तो खतरा बना ही हुआ है। गरीब की बेटी का सुन्दर होना पाप है न!

रेवती उठकर आँगन में आ गई है। रात की कालिख मिटती जा रही है। बगीचे से कोई आवाज साफ आ रही है।

राखो हो रामाऽऽ राखो···ओ
पत राखो द्रौपदी के······

४

स्लेट-पेन्सिल के साथ सुबल जब ढिबरी के सामने ओसारे में बैठकर भौजी को हाँक मारने लगा तो स्वयं माई को भी अचरज हुआ था। अब यह बुढ़वा सुग्गा पढ़ने बैठा है? सुदेव-बहू को अब यह कैसा मजाक सूझ रहा है? सुबला पढ़कर ही क्या करेगा। लोग-दुनिया सुनेगी तो क्या कहेगी। यही न, कि मरद परदेस छोड़कर चला गया तो देवर से पढ़ाई के बहाने लटपटा गई है। गरीब पर चारों तरफ से हमला है। हम कुछ भी नया काम करते हैं तो पाप-समझा जाता है। उसने झुँझलाकर कहा, "बहू रे! छोड़ यह सब गुड़िया-घरोंदा का खेल। लोग-बाग हंसकर जी जाएँगे। पढ़ाई-लिखाई हमें शोभा नहीं देगी।···समझ रही है कि नहीं कुछ?"

सुबल तो समझता था, माई भीतर-भीतर बहुत खुश होगी। सुदेव

भइया ने भी स्कूल का मुंह नहीं देखा था तो सुबल कहाँ से देखता। यह तो बड़े भाग्य की बात है कि भौजी पढ़ी-लिखी है। ऐसी नेक भौजी स्लेट पेन्सिल लेकर पढ़ाने बैठी है तो कितनी अच्छी बात है। सुबल जिस उत्साह से ढिबरी लेकर बैठा था वह उत्साह माई का वचन सुनकर हठात् नरम हो गया था। उसने कहा, "इसमें हरज क्या है, माई ?"

माई बोली, "इसमें हरज तो कुछ नहीं बेटा! लेकिन जुग-दुनिया ठीक नहीं है।"

"इसका मतलब ?"

"देवर-भौजाई को दुनिया हँसेगी और क्या ?"

इस पर रेवती से नहीं रहा गया। वह सुबल के पास धम्म से बैठती हुई बोली, "सुन लो, ईआजी ! मैं उस खानदान की हूँ जिसके हाथ में लालझंडा देखकर सारा बाबूचक थर-थर काँपता है। सुबल की मैं भौजाई भी हूँ, महतारी भी। मैं तो सोचती हूं पूरे टोले के औरत-मरद को बटोर पढ़ाऊँ। हम लोग इसीलिए तकलीफ भोगते हैं ईआजी कि अनपढ़ हैं। समझीं, कि नहीं ?"

इतनी लम्बी बात का जवाब माई क्या देती ? वह तो खुद सुदेव बहू की लम्बी-चौड़ी बातों पर हक्का-बक्का थी।

"सुबला पढ़कर क्या करेगा ?"

"बहुत कुछ करेगा।"

"बहुत कुछ में क्या-क्या ?"

"भला-बुरा समझने की अक्ल इसे आएगी।"

माई फिर झुंझलाई। "अक्ल आने से क्या होता है। ताकत हमेशा बड़ों के पास होती है।"

माई को रेवती आगे भी जवाब देती, परन्तु घर में खाँसते हुए ससुर के पास सरक गई।

सुबल को दुखी चमार की पलानी में रात भर नींद नहीं आई थी। भौजी ने जो भी अक्षर समझाए और लिखवाए ये सुबल अमृत वाणी के तरह अपने मानस में घोल गया था।...भौजी बड़ी प्यारी है। जितनी नेक है भौजी, उतनी ही समझदार भी है। इस टोले पर तो

इतनी समझदार नहीं होगी। रतनपुर में शिवजी मालिक या दो-चार दूसरे-दूसरे लोगों के यहां भौजी से थोड़ा ही ज्यादे समझदार औरतें होंगी। सुदेव भइया का करम बड़ा ठीक था कि इतनी बढ़िया मेहरारू मिल गई है।

सुबल दिनभर शिवजी मालिक के खेत में बैल की तरह खटता है और रात में भौजी के ध्यान दिलाने के पहले ही ढिबरी लेकर बैठ जाता है।

"भइया बड़े भाग्य वाले हैं, भौजी!" सुबल अचानक स्लेट पर पेन्सिल रोकते हुए कहता है।

"क्या मतलब सुबल ?"

"मतलब यह कि तुम्हारी ही तरह कोई तुम्हारी बहन होती तो मैं बेझिझक उसके साथ ब्याह कर लेता।"

रेवती बच्चों की तरह किलकारियां भरकर हँसने लगती है। "अब तो कोई बहन खाली नहीं है, सुबल भइया। मुझसे कर लो।"

"भइया नाराज नहीं होगा ?"

हठात् रेवती का चेहरा उतर जाता है। जैसे एक मिनट पहले कोई भी निश्छल हंसी नहीं हँसी हो। सुबल ने दबे हुए घाव को फिर से चकसा दिया है। मस्तिष्क में कई तरह के विचार घुड़दौड़ करने लगे हैं। सुबल इस तरह झेंप गया है जैसे उसके मुंह से कोई अनुचित बात निकल गई हो।

थोड़ी देर तक दोनों अलग-अलग सोचते रहे हैं।

"मुझसे कोई गलती हो गई न, भौजी ?" सुबल अचानक पूछता है।

"नहीं तो!..."

"तब तुम अचानक उदास क्यों हो गई हो ?"

"कैसे मालूम!"

"तुम हठात् चुप हो गई हो भौजी!...माई-बाबू ख्याल आ रहे हैं न ?"

"क्या बताऊं सुबल भइया कि अभी-अभी कौन-कौन याद आ रहे हैं।"

सुबल स्लेट-पेन्सिल और अक्षर-बोध की किताब समटने लगता है। और ढिबरी उठाकर चौरा के ऊपर रखने की कोशिश करता है।

"पढ़ने का मन नहीं कर रहा है क्या, सुबल भइया ?" रेवती चौंककर पूछती है।

"तुम्हारी तबियत ठीक नहीं लगती, भौजी।"

"तुम्हें कैसे मालूम रे पागल ? मैं तो बिलकुल ठीक हूं।"

"माई को भी पसन्द नहीं। उसे भी खराब-खराब ख्याल आते रहते हैं। ऐसी पढ़ाई से क्या फायदा है ?"

"सुबल !" रेवती उसके हाथ से ढिबरी छीन लेती है।" मैं तेरी मास्टरनी हूँ रे। इतने दिनों की मिहनत तुम छोटी-सी बात के लिए खा जाना चाहते हो ? मैं औरत होकर सब कुछ बर्दाश्त कर रही हूँ। तुम तो मरद-बच्चा हो !"

सुबल को लगता है कि भौजी के सामने वह सौ मुट्ठी का एक मुट्ठी हो गया है बोला, "मुझे लगता है भौजी कि तुम्ही मेरी सही माता हो। आज से मैं तुम्हारी हर बात मानूगा।"

"किसी की हर बात मानना भी बहुत अच्छी बात नही है, सुबल !"

सुबल आँखें फाड़कर उसे ताकने लगता है। "तुम तो गजब आदमी हो, भौजी। जब तक तुम्हारे बराबर पढ़ नही लेता तब तक तुम्हारी बातें मुझे समझ में नही आ सकतीं।"

रेवती खिलखिलाकर हँस पड़ती है। "बड़ा भोला है मेरा देवर।"

आँगन मे चौरा के पीछे बैठी-बैठी माई कुढ़ती रहती है। वह कई तरह से बातों को जोड़-जोड़कर सोचती है। कहीं ऊँचा-नीचा सुदेव बहू के पैर न पड़ जायं। पास-पड़ोस फुसफुसाहट कभी-कभार सुन लेती है···सुदेउवा बहू सुदेउवा को भूलती जा रही है और सुबल से लटपटा रही है··· दोनों साथ-साथ कटनी में जाते हैं और साथ-साथ लौटते भी हैं।···घर में आधी रात तक पढाई के नाम पर दोनों हा-हा, ही-ही···करते रहते हैं। गोदावरी की महतारी एक दिन टोक रही थी। जुग-जमाना तो खाली हल्ला ही करना जानता है न ? जब चाहे किसी की इज्जत मिट्टी मे मिला दे।··· रतनपुर तक शायद देवर-भौजाई की बातें फैली नही है। नही तो अब तक कई दर्जन शैतान आँखें रेवती के पीछे पड़ जाती। शैतान आँखों के भय ने ईआ जी को एकदम कमजोर बना दिया है।

···पता नही बाबू को क्या हो गया है। बाबू को परदेस में दो महीने से ऊपर हो रहे है।···कोई चिट्ठी-पत्री नही आयी है। कही माई की बातों मे वह दुखी तो नही है ? माई को अपनी बातें याद आती हैं, बराबर

वह सुदेव को ताने मारती रहती थी। सुदेव बराबर गाँव छोड़कर चले जाने की बात कहता रहता था। माई उसके दुखी मन पर और सेर भर नमक डाल देती थी, और कहा करती थी—'तू बराबर गाँव छोड़ने की बात करता है। गाँव छोड़कर जा भी तो?···और···एक दिन बाबू सच-मुच गाँव छोड़कर चले गए हैं। माई को अब पछतावा होता है कि वह सुदेव को क्यों ऐसा जवाब देती थी।···बाबू परदेस जाकर गाँव-जवार, घर-दुआर, महतारी-मेहर सब कुछ काहे भुला गए हैं।

माई की आँखों से ढर-ढर लोर ढरकता है। सुबल और रेवती किताब पर आँखें गड़ाए हैं। माई को चौरा के पीछे से ऐसा लगता है जैसे रेवती और सुदेव के मुंह एक-दूसरे में सट गए हों।

रात को सोते समय जब तब महसूस होता है, रेवती के पेट में कोई पिल्लू सरक रहा है। यह कोई छोटा-मोटा नहीं, दिन-प्रति-दिन बढ़ने ही वाला है। यही तो 'उनकी' निशानी रह गयी है। कहकर तो गए थे कि जाते ही चिट्ठी दूंगा। पर कहाँ दी उन्होंने कोई चिट्ठी! रेवती सुनती है कि परदेस में सौतिनों की कोई कमी नहीं। कौन ठीक, जाते ही कोई गले पड़ गयी होगी और चिट्ठी-पत्री डालने नहीं देती होगी।

ऐसी बातें ध्यान में आते ही रेवती घबड़ाने लगती है। जी में आता है उस विदेसिया के पास पंख लगाकर उड़ जाए। लेकिन उस करमजरुआ का कहीं कोई ठिकाना हो तब न? कहाँ-कहाँ उड़ती फिरेगी रेवती अकेली?

सुबल, रेवती और माई तीनों शिवजी मालिक की कटनी कर रहे थे। शिवजी मालिक बार-बार रेवती के सामने जाकर बैठ जाता। परन्तु रेवती को यह सब अच्छा नहीं लगता। लम्बा घूंघट निकाल लेती और उस ओर से अपना चेहरा घूमा लेने की कोशिश करती।

"तुम्हारे विदेसिया बेटा की कोई चिट्ठी-पत्री आयी कि नहीं?" शिवजी मालिक हठात् पूछता है।

"क्या कहूँ ए मालिक!" माई अचानक वेदना में खो जाती है। "कुछ पता नहीं चलता, बाबू वहाँ कैसे हैं! कोई पता-ठिकाना भी तो नहीं मालूम। नहीं तो सुबल को भेजती। कहीं जाते ही बाबू बीमार···"

शिवजी हँसता है। "मेरी बात मान सुबला की महतारी तो सुदेउवा

बहू को कहीं जगह करा दे।"

"क्या मतलब ?" माई चौंकती है।

"अभी नई, जवान मेहरारू है यह सुदेउवा बहू। कहीं इसके पैर ऊँच-नीच न पड़ जायें। आखिर तुम भी गरीब हो तो इज्जत-पानी है कि नहीं ?"

रेवती झोंक से खड़ी हो जाती है। उसके माथे का घूघट सरककर बिखर जाता है और वह हँसुआ तानती हुई पूछती है, "आप लोगों का भी मालिक जब किसी जवान मेहरारू का सँवाग कहीं दो-चार महीने के लिए चला जाता है तब उस अभागिन को किसी दूसरे मरद के माथे मढ़ देते हैं क्या ?".

रेवती से शिवजी मालिक को कौन कहे, माई को भी ऐसे जवाब की आशा नहीं थी। शिवजी तो तत्क्षण एकदम लजा गया था। परन्तु रेवती के इस जवाब से एकदम तिलमिला भी गया था। जवार-पथार में आज तक किसी ने शिवजी मालिक के सामने जबान हिलाने की कोशिश नहीं की है। आज एक बेगार खानदान की औरत मालिक को 'बद्‌जबान' बोल रही है ! माई काँपती हुई रेवती का हँसुआ पकड़ लेती है, कौन ठीक पगली बहू बाबू के ध्यान में मालिक पर हँसुआ न चला दे। परन्तु सुबल खाली हक्का-बक्का भौजी का मुँह ताक रहा है।

'सुनती है न, सुबला की महतारी ! तुम्हारी सुदेउवा बहू कैसी छिनाल की तरह बतिया रही है ? यहीं अगर खेत मे पटक दूँ तो···?"

"यह हाथ में हँसुआ है, मालिक।" रेवती हँसुआ फिर ऊपर की ओर तान लेती है। "मैं ऐसे खानदान की बेटी हूँ जो जुलुम के समय इसी तरह हाथ में हँसुआ उठा लेता है। हिम्मत हो तो आओ पकड़ लो न गट्टा ?"

रेवती उस खेत पर एक पल के लिए टिकी नहीं। हँसुआ भाँजती हुई घर लौट आयी। मगर ईआ जी नाराज थी। बहू की ऐसी ढिठाई पर उन्हें गुस्सा था। बहू के चलते तो मुँह का निवाला छिन जाने वाला है। सवांग पता नहीं कहाँ चला गया तब इतना ऐंठ रही है। ऐसी जवानी में परमात्मा आग लगा दे ? शिवजी मालिक खेत में पटक ही देते तो क्या कर लेती सुदेउवा बहू ? जवार-पथार में जग-हँसाई होती और पेट का बच्चा दुस-

सान होता सो अलग। यह तो कहो कि शिवजी मालिक का बड़प्पन रहा कि वे वहाँ परहेज गए। अब न तूफान मचा देंगे कि रेवती तिनके की तरह बचना भी मुश्किल हो जाएगा!

ईआ जी सुनती हैं, मालिक लोग देवता नहीं तो पत्थर होते हैं। अपने शिवजी मालिक तो दोनों हैं। अगर घर में ही अचानक रात में आ जायँ और कहने लगें कि सुदेउवा बहू से आज रात भर बदला लेंगे तो ईआ जी को हिम्मत है किसी की बात को बतंगा बनाने का? वहीं भोगने के बाद गर्दन नहीं उतार देंगे सुदेउवा बहू की? अभी कुछ बदला थोड़े है। हल्ला मचाने से क्या होगा। अपनी ही इज्जत माटी में मिलेगी।···

ईआ जी याद करती हैं, वे ब्याह में ही ससुराल आ गयी थीं। अभी आए दो ही दिन गुजरे थे कि शिवजी मालिक का बाप रात में घर के अन्दर चला आया था। पहले तो उन्हें लगा कि सुदेव के बाबू हैं, लेकिन ढिबरी के अंजोर में सफेद धप-धप किसी गोरे-चिट्टे आदमी को देखा तो खटिया से उठ गयी। उसके बाप ने लपककर उसका हाथ पकड़ लिया था और कहा था, "घबड़ा नहीं। तुम्हारा मरद आज की रात नहीं आएगा। उसे मालूम है कि प्रसाद का भोग पहले देवता लगाते हैं।"···और फिर एकदम भोर में घर से उठकर गया था। जब तक वह पापी जिन्दा रहा, कई बार रात में आता-जाता रहता था। सुदेउवा का बाप जानते हुए भी कुछ नहीं बोल पाता था। सुदेव बहू को यह सब क्या मालूम। उसे तो यही लगता है कि जमाना बदल गया है। अब ये लोग डर गए हैं।···अरे!···डरते होंगे इसके नैहर में? यहाँ तो अभी तक उन्हीं का राज है। कभी-कभार वोट माँगने के लिए लोग आते हैं तो सुराज के बारे में बतियाते रहते हैं। कभी तो कोई यह भी आकर कह जाता है कि अपना राज है। अपने राज का मतलब···ना, लक्षण ईआ जी को आज तक कुछ भी मालूम नहीं है।

शिवजी मालिक भी उस घटना के बाद खेत पर टिका नहीं था। ईआ जी को विश्वास हुआ था कि सुदेउवा बहू का पीछा करते हुए वह घर पर ही गए होंगे। इसीलिए सुबल को खेत पर ही समझाकर घर आ गयी थीं। घर पर आकर एक बात के लिए संतोष था कि शिवजी मालिक का यहाँ आँगछ नहीं है। परन्तु बहू पर गुस्सा भी कम नहीं था। उसने पुआल की

ढेर में आग लगा दी थी, जिसमें अपना तो अपना—इस रतनपुर के समूचे टोले का स्वाहा हो जाने का खतरा भी था।

आंगन में पांव रखा तो देखा, रेवती राख में रगड़-रगड़कर मछली से चिउटा छुड़ा रही है। ईआजी गुस्से में ही बोलती हैं, "मछली कहाँ से रे, सुदेउवा बहू ?"

"कटनी से लौट रही थी तो पोखरे में टोले के कुछ लड़के मछली मार रहे थे। उन्हीं के पास बैठ गयी थी तो उन्होंने थोड़ी मछली दे दी है।" रेवती उसी तरह मछलियाँ रगड़ती जा रही है।

"वह भी शिवजी मालिक का ही पोखरा है। समझती है कुछ ?"

"तब क्या मैं वहाँ लड़कों को ललकार कर ले गयी थी ?"

"नहीं ले गयी थी, लेकिन लोग दुनिया तो यही कहे न, कि सुदेउवा बहू शिवजी मालिक के पोखरे से लड़कों को बटोरकर मछली मरवा रही थी। शिवजी मालिक के कान खड़े होंगे। एक बार इसी तरह तुम्हारे ससुर ने एक मछली पकड़ ली थी। बस, इसी के लिए शिवजी मालिक के बाप इसी दुआर पर, इसी आंगन में घुसकर तुम्हारे ससुर को जूते से तड़तड़ाने लगे थे।"

"और टोला-पड़ोस के लोग इसी तरह मुंह ताकते रह गए थे ?"

ईआजी ने जैसे रेवती की इस बात को सुना नहीं हो। वह अपने मन की कहती जा रही हैं, "आज की घटना के बाद तो पता नहीं क्या होने वाला है।"

"कैसी घटना, ईआ जी ?"

"तुमने शिवजी मालिक को गाली नहीं दी क्या ?"

"गाली नहीं ईआ जी, हमारी इज्जत पर जो उन्होंने हमला किया था उसी का जवाब दिया था।"

"बर्दाश्त करना उसके जार को, कनेआ ! कहीं घर में घुस आया तो मेरी हिम्मत नहीं कि तुम्हें बचाऊँगी।"

ईआ जी कितनी मरी हुई हैं। इच्छा होती है मछली का पानी उठाकर इनके चेहरे पर फेंक दे। समय बदलने का इन्हें तनिक भी भान नहीं है क्या ? रतनपुर का यह टोला ही क्या—सारा जवार ही नहीं बदला है।

अब तक रेवती का इलाका होता तो इनके चाचा सारे लोगों को खा चुके होते। यहाँ ईआ जी फँसी हैं कि उल्टे रेवती को ही डाँट रही हैं।

"घवड़ाग्रो मत ईग्रा जी। जिस क्षण वह पापी इस आँगन में पाँव रखेगा उसी क्षण या तो उसके पाँव काट लूंगी या फिर पोखरे में जाकर डूब मरूँगी।"

ईआ जी को रेवती के इस उत्तर को सुनते ही धक् से लगता है। इसी शिवजी मालिक का बाप भी तो बहुत साल पहले इसी आँगन से होकर घर में आया था। कहीं कनेआ को सब कुछ मालूम तो नहीं? वह भी चाहती तो क्या उसके पाँव नहीं काट सकती थी!···परन्तु कनेआ का कहना सही है कि जमाना बदला हुआ है। जमाना बदला हुआ नहीं रहता तो शिवजी मालिक गौने के दूसरे ही दिन कनेआ के घर में नहीं घुस आता? यह बनावटी बात नहीं है, अगर वह घर में घुसता तो कनेआ उसके पाँव जरूर काट लेती। फिर तो जवार-पथार में एक नया काम हो जाता!

ईआ जी ने देर तक कनेआ को मुँह लगाना उचित नहीं समझा। वे तो बराबर उसके सामने मात खा जाती हैं। वह ऐसे-ऐसे जवाब लाकर पटकती है कि सुनकर डर तो लगता ही है, अचरज भी होता है।

ईग्रा जी मन को बदलने के लिए गोदावरी के घर की ओर चली गयी हैं।

रोज की तरह रात में खाने-पीने के बाद ओसारे में रेवती और सुबल ढिबरी के नीचे बैठे हुए हैं। ईआ जी चौरा के पीछे बैठी-बैठी झपकियाँ ले रही हैं।

"आज तो तुमने बहुत हिम्मत से जवाब दिया, भौजी!" सुबल स्लेट पर कुछ लिखते हुए कहता है।

"तुम्हें खराब लगा का क्या सुबला भइया?"

"नहीं भौजी। मैंने तो पहली बार ऐसी हिम्मत तुम्हीं में देखी थी। साला कुछ बोलता न, तो मैं क्या चूड़िया पहनकर बैठा रहता? मारकर आरी पर ही गिरा देता।"

"सचमुच, भइया!"

"सचमुच नहीं तो क्या झूठ भौजी? तुम्हारी तरह हर घर की भौजी

इसी तरह की हो जाए तो किसे अन्याय करने की हिम्मत पड़ेगी ? हम अन्याय, जुलुम में मिल-जुलकर आग नहीं लगा देंगे ?"

रेवती दुगने उत्साह से भर जाती है। ईआ जी ने शाम को मन को कैसा कमजोर बना दिया था। रेवती सोचती है, 'वो' इसकी रक्षा के लिए नहीं हैं। परन्तु देवर तो उन्हीं की तरह रक्षा के लिए तैयार है। रेवती का तो उन्हीं का भाई सहारा है। रेवती अब अकेली नहीं है···हिम्मत देने वाला साथ में दूसरा देवर भी है।

ईआ जी की नींद अचानक अचकचाकर टूटती है। "क्यों रे कनैआ, यह तुम लोगों की घुसुर-फुसुर कब तक चलती रहेगी ?"

ईआ जी की बात रेवती को बाण की तरह लगती है, "ऐसी बेस्वाद बात काहे बोलती हैं, ईआ जी ?"

"तुम दोनों का चाल-ढाल मुझे बिल्कुल पसन्द नहीं है।"

"क्या बकती हैं, ईआ जी। जब आप ही अपने मुँह से ऐसी बात कहेंगी तो दूसरे-दूसरे तो मजाक उड़ाएँगे ही।"

"पढ़ाई के बहाने तुम लोग अनाप-शनाप करो तो दुनिया हँसेगी नहीं ?"

"चुप रहो, ईआ जी ?" रेवती अन्धेरे में आँखें तरेर लेती है। परन्तु ईआजी चौरा के पीछे से ही अन्धेरे में रेवती के गुस्सैल चेहरे की कल्पना कर लेती हैं और पैर पटकती हुई सोने के लिए घर में चली जाती हैं।

···परन्तु रेवती अकेली नहीं है, बुराइयों, कुविचारों और जुल्मों से लड़ने के लिए साथी देवर भी मिल गया है।···और···और पेट में भी तो एक तीसरा आदमी पल रहा है। वह तो यह सब बर्दाश्त और नहीं करेगा। यह तीसरा आदमी···एकदम नया आदमी! ···

रेवती जोर-जोर से अक्षर बोलती जा रही है और युवक पीछे से दुहराता जा रहा है···

५

गोदावरी की माई जब चौरा के पीछे ईआ जी के कान में कुछ फुसुर-फुसुर करने लगी तब भी बेचारी रेवती को कुछ भी शक नहीं हुआ था। वे

दोनों आज भी उसी ढिबरी के नीचे बैठकर राहुल बाबा की किताब 'तुम्हारी क्षय' बाँच रहे थे। वे दोनों महिलाएँ भी तो निर्दोष ही हैं; जिन्हें लगता है कि औरत-मर्द एक साथ बराबर रहें तो आग लगना स्वाभाविक है।

"मैंने तो यहाँ तक सुना है," गोदावरी की माई कहती हैं, "कि सुदे-उवा बहू का पेट भी किसी दूसरे का है। नहीं तो सुदेव गौना के बाद गाँव पर रहा ही कितना दिन? उँगली पर गिनकर छः-सात दिन। वह भी घर में कब-कब गया है? सब कुछ पर विचार करना, सुबलवा के मतारी? क्या भरोसा, पेट किसका है! कोई तो कहता है, सुबलवा का है, कोई कहता है शिवजी मालिक···"

ईआ जी बात काटती हुई चीखती हैं, "क्या रे गोदावरी की महतारी, तुम्हें मेरा ही घर डँसना है? मेरी कनेआ पर ऐसा लाँछन? तू मेरी बहन दाखिल है रे!···तेरे मुँह से ऐसी बात···मुझे तो विश्वास ही नहीं होता है। मेरी कनेआ शेरनी हो सकती है, कुतिया कभी नहीं हो सकती।··· कुतिया होती तो अभी घर से निकाल देती, ए गोदा की माई···घर से निकाल देती···।"

ईआजी की सिसकियाँ तेज उठती जा रही हैं। अचानक देवर-भौजाई का ध्यान किताब से टूटता है। 'क्या हुआ है ईआ जी?' रेवती आँगन में दौड़ती है।

"मुझे कुछ मालूम नहीं है, कनेआ!" ईआ जी जब रोने लगती हैं तब गोदावरी की माई उठकर चली जाती है। "बाबू आज होते तो यह सब सुनने को नहीं न मिलता, कनेआ! सच्चाई कुछ और है, दुनियादारी कुछ और होती है। दुनिया के साथ-साथ अब मुझे भी साथ देना पड़ेगा, ए कनेआ···। चल, हम बाबू के पास अभी चलते हैं। रात-भर चलकर टीशन पहुँच जाएँगे। कोई न कोई गाड़ी हमें बाबू के पास तो पहुँचा ही देगी···।"

रेवती को कुछ समझ में नहीं आ रहा है। ईआ जी को अचानक जब तब क्या हो जाता है?···अनाप-शनाप बकने लगती हैं। वह समझने की कोशिश करती है, "घर में चलकर सो जा, ईआ जी! मैं भी चलती हूँ।"

"तू आँगन से अन्दर जा। तुम्हारा रात में बाहर निकलना ठीक नहीं

है। पेट में बाबू की निशानी है। उस निशानी को कुछ हो गया तो हम कहीं के न रहेंगे।···रात में तरह-तरह के चिड़िया-चुरुंग उड़ते रहते हैं, तुम्हें डँस लेंगे···।"

"यह सब ढोंग है। तुम अन्दर चलो ना?" रेवती हाथ पकड़ कर खींचती है।

"तू तो हर बात में इसी तरह बकती रहती है। मुझे यह सब अच्छा नहीं लगता।"

"तब क्या बात है, ईआ जी! साफ-साफ बताती क्यों नहीं?"

ईआ जी झुँझलाती हैं। "साफ-साफ क्या कहूँ? तुम्हें भी तो अकल है न, कनेआ! दुनियादारी से लड़ने की मुझमें ताकत नहीं है रे! अभी गोदावरी की महतारी बड़ी खराब-खराब बात कह रही थी···"

"क्या कह रही थीं, ईआ जी!"

"यही कि तुम्हारे बारे में गाँव में हल्ला है कि···"

रेवती क्रोध में बात काटती है, "कि मेरे पेट में बच्चा उनका नहीं है, यही न।"

"हाँ, कनेआ!"

"तब, जिसका है वह सामने क्यों नहीं आता है? मैं जिन्दगी भर के लिए उसका हाथ पकड़ लेती।"

ईआ जी जैसे उसकी बातें सुन नहीं रही हैं। "चलती काहे नहीं कनेआ बाबू के पास?"

"हम कहाँ अन्दाज पर चलेंगे, ईआ जी?"

"कहीं भी चलेंगे। नहीं तो उधर ही डूब मरेंगे!"

"इसका मतलब क्या हुआ, ईआ जी?"

"मैं अपने सोना जैसी बहू पर लांछन बर्दाश्त नहीं कर सकती।"

"क्या आपको मुझ पर संदेह है, ईआ जी!"

"ना, ना कनेआ, ना। तू तो हर गरीब आदमी की तरह सच्ची और पवित्र है। लेकिन सुबल को लगाकर लोग कहते हैं तो मन घबड़ाता है।"

"सुबल मेरा देवर है, छोटे भाई जैसा। लेकिन लोग तो शिवजी मालिक का भी तो नाम लेकर मुझे गालियाँ देते हैं। ऐसी दशा में हमें

गाँव छोड़कर जाना ठीक है क्या ? मेरे विचार का देवर है, और मेरे ही विचार की उनकी निशानी। हम यहाँ अकेले कैसे हैं ईआ जी ?"

"तुम्हारी भी बातों से मेरे भीतर कम घबराहट नहीं होती, कनेआ !" ईआ जी को अचानक एक उपाय सूझता है। "तू मेरी सलाह मान तो कुछ दिनों के लिए नैहर चली जा।"

"इस हालत में नैहर में मेरा मन बिल्कुल नहीं लगेगा, ईआ जी !"

"माई याद नहीं आती क्या ?"

"किसके माई-बाबू याद नहीं आते, ईआ जी ।"

"तब मेरी सलाह मान तो कुछ दिनों के लिए चली जा, कनेआ।"

दूसरे दिन सुबह ही सुबल भौजी को नैहर पहुँचा आया।

रेवती का गाँव छोड़ने का मतलब था अफवाहों का और भी पुरजोर और तीखा हो जाना।...परमा बहू ने अपनी पतोहू को नैहर इसीलिए पहुंचा दिया है कि बात सही है।...देख लेना, उधर ही पेट गिराकर आएगी।...और नहीं तो माई-बापू जरूर दूसरा घर कर देंगे।...इससे तो यही अच्छा था कि परमा बहू सुबलवा से ही करा देती।...घर की लाज घर में ही रह जाती।...

चारों तरफ से रास्ता चलना मुश्किल था। ईआ जी को गली, डगर, खलिहान भी अजीब आँखें बनाकर घूरने लगे थे। धान की रोपनी में शिवजी मालिक अलग ताना देते रहते थे। उसने तो यह भी कह दिया था, उसे मुझ पर ही छोड़ देती, परमा बहू। महीना-दो-महीना में आप ही ठंडी हो जाती। घर से निकालने की जरूरत ही नहीं थी। घर की इज्जत घर में ही रह जाती।...ईआजी कटकर रह गयी थीं। कर ही क्या सकती थीं ? उन्हें ही अपनी जवानी याद नहीं है क्या ? लेकिन सुनती हैं, अब तो जवाहिर लाल का राज है। जवाहिर लाल के राज में भी वैसी ही हालत है क्या हालत नहीं होती तो शिवजी मालिक को इतना कहने की हिम्मत कै होती ?

"मैं तो कहता हूं, सुबला को आज फिर उसके नैहर भेज दे।" शिव मालिक फिर कोंचता है।

"किसलिए, मालिक ?"

"इज्जत की रक्षा खातिर।"

"कैसे होगी, मालिक ?"

शिवजी उसके बहुत नजदीक जाकर कहता है, "इधर-उधर मारा-मारा फिरने से अच्छा है वह हमारे-तुम्हारे पास ही रह जाती। हम लोगों की बात तो घर में दब ही जाएगी। मेरे सामने जवाहिर लाल का राज होने पर भी किस साले की हिम्मत है ?"

ईआ जी काठ जैसी आँगन में चौरा के पीछे बैठी हैं। आँगन में ही नहीं, ओसारे में भी घुपाघुप्प अँधेरा है। परसों तक यहीं कनेआ सुबल को पढ़ाने बैठती थी। आज घर-द्वार कैसा सूना लगता है। कनेआ ठीक ही तो कहती थी, ऐसी दशा में उसका गाँव छोड़कर जाना ठीक नहीं है। परन्तु इन्हीं की मति में पता नहीं क्या समा गया कि कनेआ को जबरन नैहर पठा दिया। अब तो ईआ जी को ही अकेलापन काट रहा है। सुबल अबोध है। यह बूढ़ा भी एक जिन्दा लाश है। पता नहीं कब उठ जाए। टोला-पड़ोस के व्यंग्य-ताने से अलग परेशानी है। कुछ समझ में नहीं आता रे राम ! एक गरीब आदमी को ऐसी दशा में क्या करना चाहिए ?

आकाश में बादल शोरगुल मचा रहे हैं। एक-दो-बूँद टपक भी जाते हैं। ईआ जी चिन्ता की गहराई में ऐसे लापता हो गयी हैं कि प्राकृतिक दुनिया से बिलकुल अबोध हैं।

ठीक आधी रात को रिमझिम बरखा शुरू हो गयी है। उसी समय बाबूचक के हिरामन दादा की बैलगाड़ी रतनपुर के सीवान पर पहुँचती है। रेवती हिरामन दादा के हाथों से बैलों का रास पकड़कर खींच लेती है और कहती है, "बस यहीं रोक दो, हीरामन दादा ! गाँव का यही सीवान है। मैं यहाँ से चली जाऊँगी।"

"डरेगी नहीं बेटी तू ?"

"कैसी बात करते हो, दादा !" वह स्वयं ही बैलगाड़ी से उतरने लगती है। "बेटी भी तो तुम्हीं लोगों की हूँ।"

रेवती बारिश में बुरी तरह भीग गयी है। बदन में कपड़े सट गए हैं। वह रतनपुर से टोले की ओर डगर पर उतर गयी है। हीरामन दादा अभी तक बैलगाड़ी रोके खड़े हैं। उन्हीं का साहस सँजोकर रेवती तेजी से घर

की ओर आ रही है।

हठात् दुआर पर कनेआ की आवाज सुनकर ईआ जी चौंकती हैं। कहीं वे सपनों में तो कनेआ को नहीं सुन रही हैं ? लेकिन नींद खुलने के बाद भी कनेआ की लगातार बोली सुनायी पड़ रही है।

आंगन में घुटने भर पानी लगा हुआ है। छप-छप पानी चीरती हुई ईआजी दरवाजा खोलती हैं। वह अकबकायी हुई हैं। "हाय कनेआ, आधे रास्ते से लौट आयी क्या ? ऐसी खतरनाक रात। इस झमाझम बरखा में तुम्हें डर नहीं लगा ? घर में कुशल-क्षेम तो हैं ?"

कनेआ कुछ बोलती नहीं, घर में सरकती जा रही है। ईआ जी साड़ी उठाकर देती हैं और फिर पूछती है, बोल ना, "कनेआ कुछ ! गूंगी, तो ऐसी नहीं थी तू। रो काहे रही है ? तनिक बोल रे, मेरी समधिन ठीक तो हैं ?"

तनिक सिसकियाँ सहारे के कारण तेज हो जाती हैं, "माई एकदम कुशल से हैं, ईआ जी ! खाली मोती परसों एक घंटे की बीमारी में मर गया। चार कोस तक कोई डाक्टर नहीं था। मेरे गाँव का प्राण चला गया। उसके बिना मैं अपने गाँव नहीं रह सकती थी।"

"यह मोतिया कौन है, कनेआ ? गोतिया-सगा था ?" ईआ जी अचम्भे में डूबी हुई हैं।

"रिश्ते में तो कुछ भी नहीं था। लेकिन बचपन से ही हम एक ही साथ पढ़े-खेले थे। गाँव में ही एक-दूसरे से ब्याह करने का रिवाज होता तो मैं आपकी बहू बनकर कहाँ से आती ? 'वो' जब तक परदेस नहीं गए थे तब तक बराबर उनकी शक्ल में मोती मेरे सामने खड़ा रहता था।"

"जो होनी थी वह हो गयी। चुपचाप सो जा।"

ईआ जी ढिबरी जलाकर छोड़ देती हैं।

सुबह होते ही यह बात फैल गयी कि परमा की पतोहू नैहर से भी भाग आयी है। सारे टोले में अजीब हंगामा था। शिवजी मालिक ने तो बात को और भी बतंगड़ बना दिया था। वह तो लालची कुत्ते की तरह दरवाजे का चक्कर लगाने लगा था। इससे लोगों का संदेह और भी पक्का हो गया था।

एक दिन रेवती बिना झिझक शिवजी मालिक को टोकती है, "मेरे

दुआर पर तुम मत आया करो, मालिक।"

"काहे रे, सुदेववा वहू?" वह शैतान की तरह हँसता है।

"आप तो हम गरीबों के दरवाजे पर अपने बाप-दादों के जमाने से ही कभी नहीं आए हैं। अब खुलेआम सुबह-शाम आ जाते हैं, बेमतलब। इससे मेरी बहुत बदनामी होती है।" कनेआ के साहस पर तो ईआजी के अचम्भे का ठिकाना नहीं है।

"मेरे आने-जाने से तुम्हारे दुआर की बदनामी नहीं, शोभा बढ़ती है। समझी न? जवाहिर लाल ही तो जात-पांत मिटाने की बात करते हैं। इसी से तुम लोगों का माथा भी सनक गया है।"

रेवती बोलती है "कहिए तो आपके माथे के लिए भी राहुल बाबा की एक किताब दूँ—तुम्हारे घर्म की क्षय! जात-पांत और जिस घर्म को आप छाती और माथा से लगाए हुए हैं उसको राहुल बाबा ने नकली बताया है।"

शिवजी मालिक चौंकता है, यह साली छिनाल ही नहीं, लीडर भी है। इस इलाके में भी यह रोग तो नहीं फैल रहा है! रह जा, तुम्हारी सब शेखी एक दिन में मिटाते हैं।

ईआ जी और ससुर के दवाब के बावजूद रेवती ने शिवजी मालिक के खेत पर जाना छोड़ दिया है।

रतनपुर काफी धनहर गाँव है। बीघे में तीन मन धान काट लेना बड़ी आसान बात है। नहर में समय पर पानी आ जाता है। यही कारण है कि यहाँ गेंहू की अच्छी फसल हो जाती है। रतनपुर में प्रायः सभी प्रमुख जातियों के लोग हैं। परन्तु शिवजी मालिक और उसकी तरह के लोगों का ही अधिक बोलवाला है। रेवती जहाँ ब्याही गयी है वह रतनपुर का ही एक टोला है, जहाँ एकाध घर लोहार, बढ़ई और यादव को छोड़कर बाकी सभी हरिजन हैं। ये सभी रतनपुर के मजदूर हैं और रोटी से लेकर इज्जत-आबरू तक—सबकुछ के लिए रतनपुर पर ही आश्रित हैं। शिवजी मालिक तो दो बार एक मामूली औरत से अपमानित हो चुका है। यह रतनपुर के लिए अविश्वसनीय घटना है। उसने टोले के दो-चार लोगों के कानों-कान उसने यह घोषणा भी कर दी है कि परमा की पतोहू का किसी पराए मरद

का पेट है। उसे गाँव से निकाल-बाहर करना ही होगा। किसके पास कलेजा है, शिवजी मालिक की बात को काट दे ? न चाहते हुए भी उसकी हर बात तो माननी है। सुदेउवा वहू ने तो गाँव में अजूबा वाकया कर दिया है। उसके पेट में सुदेउवा का बच्चा नहीं तो यह किस मरद का है ?

आम औरतों की तरह सुदेव वहू कमजोर नहीं है। जब भी कहीं कानाफूसी सुनती है, चिग्घाड़कर कहती है, यह बच्चा सिर्फ मेरा है—मेरे मरद का ! जो परदेस गए हैं। 'वो' अगर होते तो हँसनेवालों की जीभ खींच लेते। मैं इसी गाँव में रहूंगी। किसकी महतारी साँड़ है जो मुझे मेरे मरद के दुआर से निकाल दे। मेरी तो लाश ही यहाँ से जायेगी।

इस भारी हंगामे के बीच एक छोटी-सी घटना हुई और बहुत जल्दी गुजर भी गई। सुदेव का बाप—परमा एक रात को मरा हुआ पड़ा था। माई और रेवती सिरहाने बैठकर छाती पीट रही थीं। परन्तु सुवल रोते हुए भी एक बहुत बड़ी मुक्ति का एहसास भी कर रहा था। फिर भी कफन से लेकर श्राद्ध-कर्म तक ज्यादा परेशानी नहीं हुई। शिवजी मालिक ने सारा गुस्सा पीकर इस विपत्ति में उन्हें सँभाल लिया था। कफन-मिट्टी के दिन भी उसने पचास रुपये दिए थे। ईआजी भी कनेआ के साथ शिवजी मालिक के आतंक को भूल गयी थीं। खाली बाबू की कमी खटक रही थी। ऐसे धूमधाम से श्राद्ध किसी हरिजन का बहुत कम होता है। कोई ब्राह्मण दरवाजे पर खाने के लिए तो नहीं आया था; लेकिन इन लोगों ने रतनपुर में पांच ब्राह्मणों के यहाँ दान श्राद्ध के दिन ही भेजवा दिया था। यही बहुत बड़ी खुशी थी कि उन्होंने दान को स्वीकार कर लिया था। शायद इस कारण से भी कि उस 'गरीब' की मदद में एक बहुत ऊँचा हाथ भी था—शिवजी मालिक का हाथ !

एक पखवारे केभीतर सब कुछ समाप्त हो गया है। लेकिन रतनपुर में शिवजी मालिक की सहायता ने रेवती के बारे में अफवाह को काफी बलवान बना दिया है। चाहे कोई कुछ कहे, मगर बच्चा तो शिवजी मालिक का ही है। नहीं तो काहे कोई इतना करेगा ? अपने रक्त के लिए किसी को काहे मोह नहीं आएगा ? दो-दो बार तो सुदेउवा वहू शिवजी मालिक

को अपमानित कर चुकी है। परन्तु उसने जबान तक नहीं हिलाई है। इतने कड़े पानी का आदमी मुफ्त में अपना क्रोध पी जाएगा ?

रात में बाबू को याद करते-करते ईआ जी को नींद नहीं आ रही है। तरह-तरह की बातें सोचती-विचारती जा रही हैं। कल तो पंचायत जो फैसला कर देगा उसे मानना पड़ेगा। पंच लोग क्या फैसला सुनाएँगे, इन्हें अच्छी तरह मालूम है। बाबू रहते तो कुछ बल रहता। अपने खून को भरी पंचायत में स्वीकार कर लेते। भरी सभा में अपनी 'सीता' की लाज बच जाती।...अब तो पंचायत में सीता की लाज लुटनी रहेगी, दुलारी सीता को गृह त्याग करना ही पड़ेगा।

"सुनती है, कनेआ एक बात ?" ईआ जी झकझोर कर रेवती को जगाती हैं।

"नींद नहीं आती क्या, ईआ जी ?" रेवती खुमारी में दूसरी करवट बदलती है।

"अरे, नहीं रे ! सुनना, एक बात ? पूछती हूँ बता ना ?"

"पूछो ना !"

"तुम्हारा बच्चा सुदेउवा का ही है न ?"

रेवती झोंक से उठती है। "बिल्कुल उन्हीं का है, ईआ जी। उफ ! पता नहीं उस कसाई ने आज तक कोई चिट्ठी-पत्री क्यों नहीं दी। यहाँ लोग फाँसी पर लटकाने पर तुले हुए हैं। मुझे फाँसी पर लटकने में कोई एतराज नहीं है, ईआ जी। झूठ, अपमान और इस जुलुम के कारण सारे बदन में आग लगी हुई है। कुछ भी पता-ठिकाना होता तो उस कठोर बिदेसिया के पास चल देती और बाँह खींचकर लाती और कहती, बोल रे बिदेसिया, बोल। सबके सामने ईमान से बोल कि बच्चा किसका है ? लेकिन 'वो' तो कहीं नहीं दीख रहे, ईआजी !...कहाँ उन्हें मैं देखूँ ? ...अब कहाँ से हिम्मत लाऊँ...कहाँ से ?"

रेवती फफक पड़ती है।

"रो मत कनेआ !...मत रो।" ईआजी तो और भी जल्दी रोने लगती हैं। "हमारा इस गाँव में कोई नहीं रे। सुबलवा तो अभी बच्चा है। तुम्हें लोग निकाल देंगे तो मैं कैसे जिऊँगी रे !"

"झूठ और जुलुम के सामने इतना कमजोर मत बनो, ईश्रा जी। हम भी कोई ककरी की वतिया नहीं हैं। कल की पंचायत होगी तो हम सामना करेंगे। तुम्हें किसी ने खबर दी है ?"

"गोदा का बाबू शाम में बोल गया था।"

"वही करा रहे हैं ?"

"नहीं, सब करा रहे हैं। शिवजी मालिक भी।"

"यह सब तो उसी पापी की चाल है ईआजी। मेरे अपमान को दुगना करने के लिए ऐसा मायाजाल फैला रहा है। लेकिन रेवती भी इतनी कमजोर चिड़िया नहीं है कि आसानी से फँस जाएगी।"

"तुम अकेली ही हो कनेआ। बहेलिये बहुत हैं।"

"अकेली कहाँ हूं—तुम, सुबल भइया जैसा देवर। फिर 'वो' भी तो यादों में समाए रहते है। उंगली पर गिनो तो, कितने लोग हो जाते हैं ?"

ईश्रा जी जिस वातावरण में पली हैं उससे डरना भी अस्वाभाविक नहीं है। जब तक रेवती से बतियाती रहती हैं तभी तक बल रहता है। फिर तो अँधेरा ही अँधेरा है। उस अंधेरे की कई परतें है—खूंखार और हिंसक पशुओं से भी खतरनाक।

पंचायत के दिन टोले भर अजीब तरह का आतंक है, जैसे सबके-सब अपराधी हों। हर बेटी और बहू डरी हुई है। असल पंच तो रतनपुर के अमीर बाबू लोग हैं। उन्हीं के हुक्म पर पंचनामा तैयार होता है। झगड़ा चाहे जिसका भी हो, कसूरवार भी कोई हो, परन्तु पंचायत शुरू होने के पहले ही सादे कागज पर बाबू लोग सबों से दस्तखत करा लेते हैं। इसकी वजह यह है कि पूछताछ के दौरान अगर किसी तीसरे को भी अचानक कसूरवार ठहरा दिया जाय तो उसके निकल भागने की कहीं गुंजाइश नहीं हो। उस सादे कागज पर लिए अँगूठों के निशान का उससे भी जबर्दस्त इस्तेमाल है। इस्तेमाल यह है कि बनिहारी मजूरी के समय साले लोग इधर-से-उधर नहीं कर सकते।

इस बार भी रेवती के बारे में पंचायत बैठी है, तब उसी तरह लोगों के अंगूठे के निशान सादे कागज पर लिए जा रहे हैं। लोग आज भी काँपते हुए अपना अँगूठा आगे बढ़ा देते हैं। परन्तु एक अठारह-बीस

साल का युवक सीना तानकर खड़ा हो जाता है, "पंचों! आज सीता की अग्नि-परीक्षा है। मेरी सीता भौजी अगिन में खडी होकर परीक्षा देगी और पवित्र होगी तो अगिन से बेलाग निकल आएगी। हमारे अँगूठे के निशान की क्या जरूरत है? यह परिपाटी गलत ही नहीं, बुरी भी है। जरा सबके चेहरे को ताकिए—फैसला मेरी भौजी के बारे में होने वाला है और सारे टोले के लोग डरे हुए हैं। मैं तो अँगूठे का निशान देने के लिए तैयार नहीं हूं।"

सुबल की बात सुनते ही पचायत में खलबली मची हुई है। शोर और हल्ला-गुल्ला से कुछ भी सुनाई नहीं पड़ रहा है। रतनपुर और इस टोले में यह पहली घटना है। कितने तो अभी भी सुबल की बात सुनकर भी उसके साहस को स्वीकार नहीं कर रहे है। सुबल अभी लडका है, सनक गया है। अनाप-शनाप बक रहा है।

दो-तीन चौकियां एक खुले मैदान में सटाकर बिछी हैं। ऊपर शिवजी मालिक के अलावे भी रतनपुर के चार-छ: लोग पालथी लगाकर बैठे हैं। परन्तु नीचे धरती पर आसन जमाये लोगों के भीतर गजब खलबली है। ऊपर वाले तो अभी तक चुप हैं और प्रभु की दया से खाली मुस्कुरा रहे हैं। परन्तु नीचे वाले लोग दहशत के कारण सुबल के खिलाफ बुरी तरह चीख रहे हैं। अगल-बगल की हवाएं, पेड़ सब कुछ कैसे शान्त हैं, जैसे वे भी अपमानित और लांछित होकर चुप हो गए हों। या उनके कंठ ही अवरुद्ध हों।

अचानक चौकी के भी ऊपर शिवजी मालिक खड़ा होकर कहना शुरू करता है, "भाई रे! तुम लोग फैसले को अपने हाथों में लेने की कोशिश मत करो। तुम लोग हंगामा करोगे तो हम यहां से चल देंगे। आखिर हम कुछ यहाँ किसलिए आए हैं—तुम्हें आपस मे लड़ाने या फैसला करने?'

चारों तरफ एकदम चुप्पी है। वह आगे कहता है, "बोल रे कारू? यह पंचायत किसलिए बुलाई गई है?"

कारू बिजली की तरह हाथ जोड़े ही खड़ा हो जाता है। "पंच सरकार! इस टोले में बहू-बेटी को इज्जत बचाकर चलना मुश्किल है। गाँव में इसी तरह की घटना होती रही तो हमारी बहू-बेटी पर भी इसका

असर पड़ेगा…।

"असल बात बोलो, कारू?" चौकी के ऊपर वाला ही कोई उसे टोकता है।

"तो साफ-साफ बता देता हूँ, मालिक!" कारू के हाथ उसी तरह जुड़े हुए हैं। "परमा काका की पतोहू और सुदेव बहू का चाल-चलन इस गांव में ठीक नहीं है। गौना में आई उसके पहले से ही उसे दूसरी देह है। इसके बदचलन होने के दो नमूने और हैं। खेत पर शिवजी मालिक से गजब-गजब बात कर रही थी। वह तो शिवजी मालिक वहाँ से भागे तभी इनकी इज्जत भी बची। एक बार और अपने दुआर पर ही शिवजी मालिक को अंट-शंट बकने लगी। मैं तो कहूँगा, सुदेव बहू बदचलन ही नहीं, मुँह की खराब मेहरारू है। हमारे यहाँ रही तो हमारी बेटी-बहू पर इसका असर पड़ेगा। ऐसी मेहरारू को परमा बहू भी घर में रखने के लिए तैयार नहीं हो सकती। आप ही लोग इसके बारे में 'नेआव' कीजिए।"

कारू पंचों की आज्ञा से फिर बैठ जाता है।

इधर-उधर से कारू के समर्थन में भी आवाज उठ रही है। तब शिवजी मालिक आदेश देता है, "पंचों की राय में यहीं सुदेवा बहू को बुलाया जाय।

सभी शिवजी मालिक के समर्थन में जोरों से चीखते हैं। सुबल फिर बिना आदेश-राय के कुछ कहने के लिए खड़ा हो जाता है, "मेरी भौजी उतनी ही पवित्र है, जितनी रामायण में सीता है।" उसका बच्चा किसी दूसरे का नहीं, मेरे भइया का है।"

"तुम्हारे भाई के सिवा किसी की भी गवाही पर विश्वास नहीं किया जा सकता।" एक पंच उसे धमकाने की कोशिश करता है।

"तब मेरी भौजी यहाँ पंचायत में नहीं आएगी?"

"ऐसी मेहरारू को कौन रखेगा?"

"मैं रखूँगा पंचो! मैं—परमा चमार का बेटा सुबल राम। वह मेरी औरत बनकर रहेगी और मैं इसी गाँव में रहूँगा। मैं भौजी के साथ ब्याह कर लूँगा। तब भौजी का बच्चा हमारा कहलाएगा न?"

जब सुवल पैर पटकता हुआ घर की ओर मुड़ता है तो शिवजी मालिक उसे रोकने की कोशिश करता है, "हमारा आखिरी फैसला भी सुनता जा, सुवला ? मुदेउवा वहू को रखना ही है तो रख सकता है। रंडी-पुतरिया रख ले। हमें क्या ? मगर हम तुम दोनों को इस टोले पर नहीं रहने देंगे ?"

सुवल दोनों हाथ फैलाकर चिल्लाता है। "सुन लो शिवजी मालिक ! मैं उसके साथ यहीं रहूँगा—इसी घर में। हमें घर में आग लगाकर जला देना। मगर गाँव हम नहीं छोड़ने वाले हैं।"

पंचायत धीरे-धीरे उखड़ने लगी है।

६

आँगन में पाँव रोपते ही सुवल की पहली नजर भौजी पर ही पड़ जाती है। क्या भौजी पंचायत से इतना उदास है ? तब चेहरा उतरा कैसे है ? वह लपककर पूछता है, "उदास हो भौजी !···तुम तो इस गाँव की सीता मइया हो ! सबों की हेकड़ी कहाँ चली गई ? मैं तो तुम्हीं से बल लेकर ही तो इतना कुछ बोल गया था। मुझसे नाराज हो, भौजी ?"

"नहीं, सुवल भइया," रेवती चौखट पर बैठती है, "मगर तुमने सचमुच का मुझे परीक्षा में डाल दिया। तब क्या सचमुच मैं तुम्हारी मेहरारू बन सकूँगी, सुवल ? मेरे पेट में तो उन्हीं का बच्चा है न ! उन्हीं के स्नेह-दुलार का चिन्ह ! मैं तुम्हारी पत्नी कैसे हो सकती हूँ। इस मन का बंटवारा कैसे करूँगी सुवल !···कैसे करूँगी !···मुझे आग, पानी, गोली, बन्दूक से बिल्कुल कोई डर नहीं है। लेकिन मेरा मन तुम्हें अपना पति कैसे मानेगा, सुवल !···कैसे···!"

"भौजी ! तुम तो मेरी भी सीता माई हो—मुझे रास्ता और अकल दोनों देती हो, ताकत देती हो ! लोग तो तुम्हें ही भरी पंचायत में बुलाना चाहते थे। पता नहीं, पंचायत में लोग तुम्हारे साथ कैसा सलूक करते। मैं इसे कैसे बर्दाश्त कर सकता था !···" सुवल की आँखों से मोती दाने

असर पड़ेगा...।

"असल बात बोलो, कारू?" चौकी के ऊपर वाला ही कोई उसे टोकता है।

"तो साफ-साफ बता देता हूँ, मालिक!" कारू के हाथ उसी तरह जुड़े हुए हैं। "परमा काका की पतोहू और सुदेव बहू का चाल-चलन इस गांव में ठीक नहीं है। गौना में आई उसके पहले से ही उसे दूसरी देह है। इसके बदचलन होने के दो नमूने और हैं। खेत पर शिवजी मालिक से गजब-गजब बात कर रही थी। वह तो शिवजी मालिक वहाँ से भागे तभी इनकी इज्जत भी बची। एक बार और अपने दुआर पर ही शिवजी मालिक को अंट-शंट बकने लगी। मैं तो कहूँगा, सुदेव बहू बदचलन ही नहीं, मुँह की खराब मेहरारू है। हमारे यहाँ रही तो हमारी बेटी-बहू पर इसका असर पड़ेगा। ऐसी मेहरारू को परमा बहू भी घर में रखने के लिए तैयार नहीं हो सकती। आप ही लोग इसके बारे में 'नेआव' कीजिए।"

कारू पंचों की आज्ञा से फिर बैठ जाता है।

इधर-उधर से कारू के समर्थन में भी आवाज उठ रही है। तब शिवजी मालिक आदेश देता है, "पंचों की राय में यहीं सुदेउवा बहू को बुलाया जाय।

सभी शिवजी मालिक के समर्थन में जोरों से चीखते हैं। सुबल फिर बिना आदेश-राय के कुछ कहने के लिए खड़ा हो जाता है, "मेरी भौजी उतनी ही पवित्र है, जितनी रामायण में सीता हैं।" उसका बच्चा किसी दूसरे का नहीं, मेरे भइया का है।"

"तुम्हारे भाई के सिवा किसी की भी गवाही पर विश्वास नहीं किया जा सकता।" एक पंच उसे धमकाने की कोशिश करता है।

"तब मेरी भौजी यहाँ पंचायत में नहीं आएगी?"

"ऐसी मेहरारू को कौन रखेगा?"

"मैं रखूँगा पंचो! मैं—परमा चमार का बेटा सुबल राम। वह मेरी औरत बनकर रहेगी और मैं इसी गाँव में रहूँगा। मैं भौजी के साथ ब्याह कर लूंगा। तब भौजी का बच्चा हमारा कहलाएगा न?"

जब सुबल पैर पटकता हुआ घर की ओर मुड़ता है तो शिवजी मालिक उसे रोकने की कोशिश करता है, "हमारा आखिरी फैसला भी सुनता जा, सुबला ? मुदेउवा बहू को रखना ही है तो रख सकता है। रंडी-पुतरिया रख ले। हमें क्या ? मगर हम तुम दोनों को इस टोले पर नहीं रहने देंगे ?"

सुबल दोनों हाथ फैलाकर चिल्लाता है। "सुन लो शिवजी मालिक ! मैं उसके साथ यहीं रहूँगा—इसी घर में। हमें घर में आग लगाकर जला देना। मगर गाँव हम नहीं छोड़ने वाले हैं।"

पंचायत धीरे-धीरे उखड़ने लगी है।

६

आँगन में पाँव रोपते ही सुबल की पहली नजर भौजी पर ही पड़ जाती है। क्या भौजी पंचायत से इतना उदास है ? तब चेहरा उतरा कैसे है ? वह लपककर पूछता है, "उदास हो भौजी ! ···तुम तो इस गाँव की सीता मइया हो ! सबों की हेकड़ी कहाँ चली गई ? मैं तो तुम्हीं से बल लेकर ही तो इतना कुछ बोल गया था। मुझसे नाराज हो, भौजी ?"

"नहीं, सुबल भइया," रेवती चौखट पर बैठती है, "मगर तुमने सचमुच का मुझे परीक्षा में डाल दिया। तब क्या सचमुच मैं तुम्हारी मेहरारू बन सकूँगी, सुबल ? मेरे पेट में तो उन्हीं का बच्चा है न ! उन्हीं के स्नेह-दुलार का चिन्ह ! मैं तुम्हारी पत्नी कैसे हो सकती हूँ। इस मन का बंटवारा कैसे करूँगी सुबल ! ···कैसे करूँगी ! ···मुझे आग, पानी, गोली, बन्दूक से बिल्कुल कोई डर नहीं है। लेकिन मेरा मन तुम्हें अपना पति कैसे मानेगा, सुबल ! ···कैसे···!"

"भौजी ! तुम तो मेरी भी सीता माई हो—मुझे रास्ता और अकल दोनों देती हो, ताकत देती हो ! लोग तो तुम्हें ही भरी पंचायत में बुलाना चाहते थे। पता नहीं, पंचायत में लोग तुम्हारे साथ कैसा सलूक करते। मैं इसे कैसे बर्दाश्त कर सकता था ! ···" सुबल की आँखों से मोती दाने

से दो-तीन बूंद आंसू चू पड़ते हैं।

रेवती के मन में सुबल के लिए भी कम जगह नहीं है। मन बड़ा विशाल है उसका। सुबल को मन से निकाल भी नहीं सकती ! अभूतपूर्व द्वन्द्व और हाहाकार उसके भीतर है जिसे रेवती जैसी नारी ही बर्दाश्त कर सकती हैं। वह समझाती है, "कमजोरी मत लाओ, सुबला विचार करो। अगर 'वो' आ गए तो मैं उन्हें तुम्हारी पत्नी के रूप में कैसे मुँह दिखाऊंगी ? क्या वे अपने बच्चे को स्वीकार करेंगे ? क्या वे पहचान जाएँगे कि बच्चा उन्हीं का है ? इन शैतानों के मुँह पर तमाचे के लिए यह जरूरी है कि 'वो' अपने बच्चे को पहचान लें।...उसी दिन मेरे मुंह की लाली भी रहेगी। तभी तुम्हारी पत्नी बनकर जिन्दा भी रह सकूंगी, नहीं तो जिन्दगी भर के लिए मेरे मुँह से कालिख नहीं धुल सकेगा !"

"मैं तुम्हारे साथ सो भी नहीं सकता, भौजी ! मुझे सोने का साहस भी नहीं हो सकता।...मगर इतना तो सच जरूर है कि मैं तुम्हारे बिना जिन्दा भी नहीं रह सकता। यह सब तुम्हारा ही था न, कि शैतानों की पंचायत में भी एकदम डरा नहीं ! फिर तो, मैं बोल ही कहाँ रहा था। वह तो तुम्हीं मेरी आत्मा में बोल रही थी। शैतान भी इतना समझ रहे थे यह सुबल नहीं बोल रहा है, सुदेव बहू बोल रही है !..."

"बात तो तुमने ठीक ही कही है," रेवती कहती है, "इसके आगे उन शैतानों को सही जवाब हो भी क्या सकता है। मुझे तो तुम पर घमंड है सुबल, कि तुमने उन्हें करारा जवाब दिया है। मगर मेरी जो दोतरफा लड़ाई हो गई है !"

"कैसी दोतरफा भौजी ?"

"एक तो अपने भीतर के खिलाफ। दूसरी लड़ाई उन शैतानों के खिलाफ।"

"हम एक काम क्यों नहीं करते भौजी ?" सुबल को अचानक उत्साह महसूस होता है।

"कौन-सा काम, भइया ?"

"हम भइया को खोजने क्यों नहीं चलते ?"

"हम उन्हें कहाँ-कहाँ खोजेंगे। 'वो' हमें कहाँ मिलेंगे ! मिल जाते

तब फिर क्या बात थी। तब तो मैं सारी दुनिया को अकेली जीत लेती।"

"तुम कहीं दूसरी जगह नहीं जा सकती क्या?"

"कहां जाऊंगी?"

"भाई के घर—नैहर।"

रेवती का चेहरा बदलता है। "सुन ले सुबल! मैं ऐसे हंगामे के समय अपने पति का गांव नहीं छोड़ सकती। जो कुछ भी होगा उसे बर्दाश्त करूंगी।...और तब तक इसी गांव में रहूंगी जब तक 'वो' नहीं आ जाते हैं।"

सुबल ने भी गांव में ही रहने की बात पंचायत में कही है। लेकिन उसे लगता है कि यहां चैन से रह पाना बड़ा मुश्किल है। भौजी उससे ब्याह कभी नहीं कर सकती। वह जिन्दगी भर भइया का इन्तजार करेगी।... भइया भी तो बड़ा गजब आदमी है। उसे घर-दुआर की कोई सुध-बुध नहीं है? बाबू मर गया, इस हालत में भी उसे नहीं आना था? उसकी सीता तो अभी तक अग्नि परीक्षा में खरी उतरी है। मगर जहां हजारों ऐसी शैतान आंखें और खराब विचार हों वहां सीता कब तक बचती रहेगी? रावणों की तो कतार है यहां!

शाम को सुबल खाकर उठ ही रहा था कि रेवती उसे टोकती है, "कहीं जरूरी काम से जाना है?"

"नहीं, भौजी।" सुबल अंगोछे में हाथ पोंछते हुए कहता है, "जहां सोता हूं वहीं जाना है। और कहां जा सकता हूं।"

"तब आज पढ़ना नहीं है?"

सुबल चौंकता है।

"यह सब व्यर्थ है, भौजी!"

"क्या बकते हो?" रेवती को आक्रोश उभरता है। भरी पंचायत में मुझे अपना मेहरारू बनाने में व्यर्थ नहीं लगा था और ज्ञान-समाज के लिए पढ़ने-लिखने की बात करती हूं तो व्यर्थ लगता है?"

'मुझसे गलती हो गई, भौजी। मुझे माफी दे दो।" सुबल मुंह लटका लेता है।

"कैसी गलती?"

"मैंने पंचायत में गलती कर दी है।"

"चुप रह मूरख ?" रेवती उसे फिर डाँटती है ।" ऐसी हिम्मत पर तू मेरा पति कैसे बनेगा ? इसी बल पर तू मेरे लिए रावणों से लड़ाई लेगा ? काहिल···"

सुबल ढिबरी उठाकर अन्दर जाता है और किताबें, स्लेट, पेन्सिल लेकर ओसारे में बैठ जाता है। वह बिना भौजी की प्रतीक्षा किए बोल कर किताब पढ़ने लगता है।

आँगन में चौरा के पीछे बोरा डालकर ईआ जी उदास बैठी हैं। गोदावरी की महतारी एक बात और दोपहर में आकर कह गई थी। बिरादरी वाले हुक्का-पानी बंद करने की बात कर रहे थे । इसके लड़के ने पंचों का अपमान किया है। पहले का जमाना होता तो लोग वहीं सुबलवा को पकड़ कर 'मुशक' चढ़ा देते और सुबलवा छटपटा कर रह जाता।··· शिवजी मालिक चुने हुए हुए मुखिया भी तो हैं। वे चाहते तो घर पर दरखास्त मँगवा कर ही रेवती सुबल या किसी को भी एक महीने के लिए जेल भेजवा सकते हैं···शिवजी मालिक 'मजिस्ट्रेट' भी हैं···

पंच लोग रेवती के खिलाफ कागज भी तैयार कर रहे हैं। मजबून का कुछ भी पता नहीं चल रहा है।गोदावरी का बाप बोल रहा था कि सुदेउवा बहू पर हँसुआ से हमला करने का मुकदमा ठोकेंगे शिवजी मालिक! शिवजी मालिक जिद्द पर हैं कि इस बदजात औरत को गाँव से निकालना ही होगा।

ईआ जी अचानक रोने लगती हैं।

"क्या हो गया, ईआ जी !" वह उठकर बैठ जाती है।

"क्या नहीं हुआ रे, कनेआ ? बाबू का कहीं पता नहीं है। शिवजी मालिक तुम्हें जेल भेजने की तैयारी कर रहे हैं।"

"सुराजी लोग भी तो जेल जाते थे। मैंने चोरी, डकैती थोड़े की है कि मुझे लाज है। जेल में ही कुछ दिन रह जाऊँगी तो क्या हो जाएगा ?"

"तुम्हारे लड़के का क्या होगा ? वह जेहल का लड़का कहलाएगा कि नहीं ?"

"मेरा बेटा बन्दूक की गोली से भी तेज निकलेगा, ईआ जी। यही बेटा

ता आगे चलकर हमें-तुम्हें बचाएगा। सुराजियों की तरह बीर-बाँकुड़ा निकलेगा। हमारा भविष्य ऊहन में ही तो चमकेगा।"

"सो तो ठीक है रे, कनेआ। गोदावरी के बाप से शिवजी मालिक कह रहे थे कि सुदेउवा जिन्दा नहीं है। उसकी महतारी उसकी श्राद्ध कर दे। हाय ए रामजी! बाबू हमारे कहाँ हैं···।" वह फिर रोने लगती है।

रेवती हड़बड़ाकर उठती है और अँधेरे में टटोलकर गड़ासा उठा लेती है, "मैंने उस पापी की अभी जान नहीं ले ली तो देवकी चाचा के खानदान की बूंद नहीं। क्या समझता है मुझे वह—औरत या हरिजन?"

ईआ जी उसे लपककर पकड़ती हैं। "पाँव पड़ती हूँ। बेटी रे! अभी यह सब धन्धा छोड़ दे। उसके कटने से बाबू नहीं मरेंगे। बाबू तुम्हारा बदला लेने गाँव जरूर आएँगे···।"

रेवती गंडासा लिए ही फिर खाट पर बैठ गयी है, जैसे उस दुश्मन के इंतजार में बैठी हो।

"तू गंड़ासा उधर फेंककर सोती काहे नहीं रे?" ईआ जी हाथ पकड़ कर खींचती हैं।

"आज रात मुझे नींद नहीं आएगी।"

"तब बैठी-बैठी क्या करेगी रात भर?"

"सुबह तक या तो जेल जाऊँगी नहीं तो जान दे दूंगी।"

ईआ जी घबड़ा जाती है। क्या हो गया अचानक कनेआ को? कभी-कभी इसे क्या हो जाता है? रहती है, रहती है सनकी की तरह बतियाने लगती है। हो न हो इस पर भूत-प्रेत का ही आँगछ है। चाहे जैसे हो पिलवा मुसहर से इसे दिखलाना जरूरी है। एक जवान बेटा घर छोड़कर भाग ही गया है। बहू पगलाती ही जा रही है। अभी पता नहीं मालिक लोगों की आँखें इसे कहाँ-से-कहाँ पहुँचाएँगी। ले-देकर एक सुवल रह जाता है। यह तो अभी एकदम बच्चा है।

ईआ जी का मन नहीं मानता। अभी तक कनेआ माटी की मूरत की तरह न हिलती है, न बढ़ती है। सोती काहे नहीं है। कहीं सचमुच कुछ कर दिया तो? वे फिर बोलती है, "जेल कैसे जाएगी, कनेआ?"

"पापी को इसी गंडासे से मार डालूंगी। मेरे 'वो' अमर फल चखकर

परदेस गए हैं। वे मरे नहीं हैं, ईश्रा जी। उनका पापी श्राद्ध क्या कराएगा, मैं ही उसका श्राद्ध कराऊँगी। श्राद्ध की बात सुनकर बदन में आग लगी है। मैं उसके साथ रात-रात भर मजे उड़ाऊँ तो मैं बहुत अच्छी हूँ। हम उनके लिए भोगने-खाने की ही चीज हैं न, ईआ जी?"

ईआजी उठकर रेवती के हाथ से छीनकर गंड़ासा अँधेरे कोने में पटक देती हैं। "मेरी बात भी सुन लो, ईआ जी। अगर अब से वह मेरे दरवाजे आया तो इसी गंडासे से उसके पाँव काट लूंगी। वह मुझे दूसरी औरत समझता है क्या?" रेवती के भीतर अजीब तरह की बेचैनी है। वह अपने सतीत्व की लाज बचाने में खुद सक्षम है।

"सुबह पिलवा मुसहर के पास चलेगी, मेरे साथ?" ईश्रा जी उसकी चिन्ता को झटका देती हैं।

रेवती खिलखिलाकर हँसती है, "क्या हो गया है मुझे?"

"बहुत कुछ हो गया है तुझे। पेट में लड़का सयाना होता जा रहा है। तुम बहुत अनाप-शनाप बक रही हो। पिलवा मुसहर को देखते ही तुम ठीक हो जाओगी। वह पहुँचा हुआ ओझा है। जवार-पथार में सब तरह की बीमारी ठीक कर देता है। उसके भभूत का छुआ लड़का बराबर जीता है। मेरी बात मान, सवेरे तू चल?"

"चुप रहो ईश्रा जी?" रेवती झुंझलाकर डाँटती है, "हँसुआ के ब्याह में खुरपी का गीत मत सुनाओ। उस पापी का स्मरण आते ही बाहर-भीतर आग लग जाती है।"

ईआ जी खामोश हो जाती हैं और रेवती रात भर सोच में डूब जाती है।

ईश्रा जी तो शिवजी मालिक के खेत पर आती-जाती थीं, परन्तु रेवती ने तो उधर सोचना भी छोड़ दिया था। सुबल रतनपुर से कोस भर आगे रघुनी टोला गाँव में एक कौलेसर यादव के यहाँ हल जोतने लगा था। सारे परिवार के लिए रतनपुर के सारे दरवाजे पंचायत के बाद बंद कर दिये गये थे। रेवती बकरियाँ लेकर डगर-बधार की ओर निकल जाती थी। लेकिन रतनपुर के कुछ युवक—या बूढ़े-सयाने भी रास्ते में ताने-बाने कसने से बाज नहीं आते थे। रेवती बिफरकर रह जाती थी।

एक दिन बड़ा अजीब बात हो गया था।

एक युवक रेवती की ओर आँखें मारकर अरहर की झुरमुट में चलने का इशारा कर रहा था। रेवती सोचने लगी थी, अब से चोली में एक कटार छिपाकर रखना चाहिए था। परन्तु इसने भी बड़ी हिम्मत से काम लिया। रेवती जोर से बोली, "कहाँ चलने के लिए कहते हो। क्या मेरी कोई बकरी तुम्हारे अरहर में घुस गयी है ?"

युवक का मन लबलबा गया था। उसने कहा, "अरे नहीं रे, सुदेउवा बहू, मुझे नहीं पहचानती क्या ? मैं तो शिवजी···"

रेवती ने लपककर बात को काट लिया था, "समझ गयी ! समझ गयी ! तू तो शिवजी मालिक का यार है न ?"

युवक चौंक गया। साली कहीं गाली तो नहीं दे रही है? "देख सुदेउवा बहू, मेरी मर्यादा पर चोट पहुँचायी तो यहीं पटक दूँगा ?"

"मुझ पर तू धौंस क्या जमा रहा था। मैं तो तुम्हारे भले की ही बात कह रही थी।" रेवती ने कुछ हँसने की कोशिश की।

"क्या कहना चाहती थी, बता ?"

"मुझे अरहर के खेत में घुमने के लिए कह रहा था न ?"

"बस, बस ! हम लोग पलक मारते ही निकल आएँगे।"

"मगर मेरी एक शर्त है।"

"बोल ना, तुम्हारी क्या शर्त है ?" युवक उत्साहित हो रहा था।

"शर्त मानेगा जरूर ?"

"एकदम अपनी कसम से।"

"अपनी कसम क्या होता है। मालिक लोग तो बहुत तरह की कसमें खाते हैं। उसी तरह की कुछ सही कसमें खा न ?"

'सो सुन ले, मैं आन पर जान देने वाले खानदान का आदमी हूँ। मैं तुम्हारे पास धन-दौलत जो चाहो हाजिर कर सकता हूँ। बस, तुम्हारा शरीर मुझे चाहिए। अगर मैं पूरा नहीं कर दूँ तो असल बूँद की पैदाइश नहीं, समझी ?"

"सो तो मुझे मालूम है कि तुम कहाँ की बूँद हो। मगर और कुछ मेरे विश्वास के लिए कह ना ?"

रेवती की जिद उसे मचलती वालिका की तरह आनन्द दे रही थी। "अगर मैंने तुम्हारी शर्त पूरी नहीं की तो मैं स्वयं अपनी वहन…।"

"वस, वस ! यहीं तक रहने दे।" रेवती ने उसकी फिर वात काट दी, "अव मैं समझ गयी कि तू मेरी वात मान लेगा। तो एक मामूली-सी शर्त मेरी भी है। अगर तू अपनी वहन की शादी मेरे देवर सुवल से करा दे तो मैं भी तेरे साथ इस अरहर में घुसने के लिए तैयार हूँ।"

कुछ क्षणों के लिए तो वह युवक हक्का-वक्का था। परन्तु तत्काल वह रेवती को मारने के लिए लपका। इस वीच रेवती ने पगार से ईंट उठा लिए थे। उसने तावड़तोड़ चलाना शुरू कर दिया था।

युवक के सिर से खून निकल रहा था। उसका माथा जोरों से झन-झना रहा था और वह आरी पर लेट गया था। रेवती वहाँ रुकी नहीं। वकरियों को हाँकती हुई तेजी से घर की ओर निकल गयी थी।

दो ही चार मिनट में खवर आग की तरह जवार-पथार में पसर गयी कि सुदेउवा वहू सनक गयी है। वह जिसको पाती है, उसी को ईंट उठाकर मारने लगती है। दीना वावू के लड़के को ईंट से मार-मारकर आरी पर पार दिया है। वह देखने में खाली इन्दर-परी है। वड़ी ससुरी जालिम है—जालिम ! दीना वावू का वेटा कॉलेज में पढ़ता है। कित्ता रईस है, बिल्कुल वाप पर ही गया है। उसकी जान लेने पर तुली हुई थी। यह तो कहो, किसी तरह दीना वावू के लड़के की जान वच गयी है। दीना वावू पुण्यात्मा थे।

कुछ लोग तो चौदह कोसी पंचायत के चक्कर में थे। परन्तु दीना वावू या शिवजी मालिक कोई भी किसी वात के लिए कम नहीं था। पंचायत की ऐसी-तैसी ? दीना वावू ने सीधे जाकर दारोगा की मुट्ठी में नोट ठूँस दिया—अव दारोगा वावू चाहो तो इज्जत वचा लो, चाहे डूवा दो। रईस आदमी की जिन्दगी अकारथ है ! …क्या कहा, औरत जात ?…साली औरत नहीं, मर्द की भी वाप है। लड़का एकदम सादा और रईस। अरहर के अन्दर झुरमुट में इशारे से वुला रही थी। नहीं तैयार हुआ तो पीटने लगी। क्या कहा झूठ वात है ?…नहीं दारोग जी, नहीं।…रतनपुर के उस टोले के सव ससुरे गवाह हैं।

दारोगा बाबू तमतमाए हुए गाँव की ओर दौड़े हैं। इसी समय रात में पकड़कर साली को ठंडा कर देना है।…न रहेगा बाँस, न बजेगी बाँसुरी। अधिक छटपटायी तो मारकर फेंक देंगे।

सुबल हाँफता हुआ आँगन में घुसा है।

"भौजी ! जल्दी करो। हम दोनों फौरन गाँव छोड़ दें। दारोगा आ रहा है।"

"हम दोनों चल देंगे तो ईआ जी का क्या होगा सुबल ?"

ईआ जी कहती हैं, "तुम दोनों कहीं जाओ, कनेआ ! और अपनी जिंदगी बचा लो।"

"बेटी को आशीर्वाद देती हो न, ईआ जी ! 'वो' लौटें तो उन्हें बता देना, उनकी निशानी को जिन्दा रखने के लिए मैं सब कुछ सहूँगी।"

"मेरा आशीष है रे बिटिया ! जल्दी कर ?" ईआ जी डकर-डकरकर रोती हैं।

पुलिस और दारोगा के पहुँचने के पहले रेवती और सुबल जवार छोड़ चुके थे। आखिर दोनों कितनी दूर तक जा सकते हैं। भाले, गंडासे के साथ लोग चारों तरफ बगीचा और बधार में ढूँढ रहे हैं। आखिर सुबल उस छिनाल को कहाँ तक भगाकर ले गया होगा !…बोल ना रे परमा बहू, पतोहिया कैसी कुलक्षण निकली कि देवर को लेकर भाग गयी ! दीना बाबू तो यह भी कहते हैं कि वह छिनाल बीच रास्ते में ही सुबला को मरवा डालेगी और खुद किसी और तगड़े आदमी के साथ चल देगी। तब सुदेव परदेश से लौटेंगे तो अपना ही ठेंगा चाटते रह जाएँगे।

गाँव अब उस कुलटा से बिल्कुल निश्चिंत है। खाली गोदावरी और ईआ जी रेवती के लिए फुक्का फाड़कर रोती हैं।

ईआ जी को कई बार थाने में बुलाया गया था। थोड़े दिनों तक लगता था ईआ जी बहुत परेशान होंगी। लेकिन इस बुढ़िया के पास था ही क्या —खाली गरीबी ! एक बात और है, पहले ही विपत्ति की कल्पना-मात्र से ही आदमी को चारों तरफ अँधेरा-ही-अँधेरा लगता है। लेकिन आदमी थोड़ा मन को कड़ा कर ले तो प्रकाश-ही-प्रकाश नजर आता है। जिस दिन रेवती और सुबल घर छोड़ रहे थे उस दिन ईआ जी स्वयं महसूस कर्.

थीं कि वे वेजान हो रही हैं। परन्तु अब उन्हें लगता है कि रेवती उनके लिए प्रकाश छोड़ गयी है। शिवजी मालिक के चेहरे से नफरत होती जा रही है। जो भी कनेआ को कुछ बोलता है तो मन में यही बात आती है कि उसकी जवान खींच लें। चिन्ता इसी बात की है कि दोनों कहाँ होंगे, किस तरह होंगे। कनेग्रा जवान है, 'लरकोर' है। दुश्मन तंग करेंगे तो वे 'बच्चे' अपनी रक्षा कैसे कर सकेंगे।

···बाबू अब भी आ जाते। तब तो ईश्रा जी का भाग्य ही खुल जाता। ···पापी शिवजी मालिक बोलता है कि बाबू मर गये हैं। ससुरे को भगवान जी ने तार भेजा है क्या! इन्हें न भी चाहो तब भी हमारी दुनिया में पता नहीं कहाँ से घुस ही आते हैं। अब तो जो भी कनेआ श्रौर सुबल को लेकर खराब-खराब बात करने की कोशिश करता है, तब ईश्रा जी उससे गाली में ही बात करती हैं। कहती हैं, वह तो अपनी भौजाई को शैतानों की आँखों से बचाने के लिए कहीं लेकर चला गया है। तुम्हारी माँ-बहन को भगाकर तो नहीं ले गया है? बाबू मेरा सुदेव आ गया तब सबको बाँस करेगा। कनेग्रा के साथ उन शैतानों की बुरी नीयत रेसे-रेसे में थी। कनेआ की इतनी ही गलती है न कि उसने शिवजी मालिक श्रौर दीना बाबू के लड़के से अपनी इज्जत बचा ली है। इन्हीं की आँख के सामने एक दर्जन जवान कनेआ बेटी उनका भोजन बन गयी है। किसी की जवान तक हिली है? शिवजी मालिक का बाप भी तो शैतान से कम नहीं था। ईआ जी के साथ रात भर जबरन सोता था। कनेग्रा ने साहस दिखलाकर तो गाँव को रास्ता दिया है। तभी तो चौदह कोसी पंचायत की जरूरत पड़ी है। कनेआ हाथ में गंड़ासा न उठाती तो पंचायत की क्या जरूरत थी। परन्तु वे पापी तो पंच हैं। फैसला क्या देते।···कनेआ ने शैतानी फैसले को ठेंगा दिखला दिया न?

टोले की आँख खोलने के लिए यही बहुत है। ईश्रा जी अलख जगाती फिरती हैं, हम-तुम जी कर क्या करेंगे? तुम्हारी इज्जत के खिलाफ कोई देखे-सुने तो उसकी श्राँख निकाल लो।

कनेआ के जाने के बाद ईआ जी को रोस कुछ हुआ न? परन्तु मन में जब-तब शंका कील की तरह चुभती रहती है, कहीं कनेआ का पेट बाबू

का नहीं हुआ तब ? सुबला का भी तो हो सकता है। दोनों का आपस में मेल-जोल भी तो बहुत था न ! मेहर-मर्द की तरह रात-दिन इकट्ठे रहते थे।···बाबू कहीं आए और कह दिया, कनेआ को लड़का मुझसे नहीं है, तब ! सौतानों की ओर भी चलती हो जाएगी न ? सुबला के मुंह से कभी-कभार ईआ जी सुनती थी, मेरी भौजी सीता मइया है···सीता मइया कोई देवी-देवता हैं ! जरूर हैं तभी तो सुबला भी कहता रहता है।

सीता मइया लौटकर आएँगी तो अग्नि-परीक्षा देंगी और बाबू उसे स्वीकार लेंगे। यही है कि बाबू होते तो अपना आदमी तैयार कर चुके होते और गाँव में लड़ाई होती···इसी गाँव से इज्जत के लिए लड़ाई···।

ईआ जी तो सबके सामने बड़बड़ाती है—मेरी कनेआ सीता मइया है। खाली उसके राम आ लें—बस !

७

सुबल को रेवती के नैहर में रहते पन्द्रह दिन हो गये हैं। उसे स्वयं भी भार की तरह लगता है। हालांकि रेवती के बाबू या माई किसी ने कुछ भी नहीं कहा है। वह इधर-उधर चुपचाप बैठा रहता है। भौजी को चुपचाप छोड़कर चला जाना भी तो ठीक नहीं है। उसे लड़का होने में कुछ दिन और देर है। उसके घर वाले तो यहाँ तक कहते हैं कि रेवती अब लौटकर रतनपुर कभी नहीं जाएगी। बेटी के साथ उन्होंने अच्छा व्यवहार नहीं किया है। मेरी सीता बेटी को रतनपुर वालों ने बहुत तकलीफ दी है। अब सुदेव परदेस से लौट भी आया तो रेवती रतनपुर नहीं जाएगी। वे बेटी का 'दूसरा घर' करा देंगे।

सुबल जब-जब रेवती का दूसरा घर कराने की बात सुनता है तब-तब वह बात सुबल को अच्छी नहीं लगती है। सुबल ने तो भरी पंचायत में चिल्लाकर कहा था, भौजी को वही रख लेगा। लेकिन भौजी गाँव छोड़कर नहीं जाएगी। भौजी का वह हाथ पकड़ने के लिए तैयार है। ये लोग दूसरा घर कराने के लिए बारम्बार क्यों कहते हैं ? वहाँ गाँव पर हल्ला

है कि यह सुबल के साथ भाग गयी है। गाँव लौटकर गया तो क्या लोग इसे जिन्दा छोड़ेंगे !

"मुझे आज्ञा दो, भौजी !" सुबल पूछता है।

"कहाँ जाओगे भइया ?"

"कहीं भी !...भइया की तरह कहीं भी चला जाऊँगा।"

"और मैं यहाँ क्या करूँगी ? तुम भी मेरा साथ छोड़ दो तो जीऊँगी कैसे ? इस बच्चे का रक्षक नहीं बनोगे सुबल ?"

सुबल घबड़ा जाता है। "यहाँ निठल्ला बैठकर रोटियाँ तोड़ते रहना अच्छा नहीं लगता, भौजी !"

"तुम्हारे इस बच्चे में देर ही क्या है, सुबल ?"

सुबल चौंकता है, "मेरा बच्चा, भौजी !..."

"तब और क्या ? दुनिया को समझाने के लिए तो तुम्हारा ही कहना पड़ेगा न ? उनके तुम पूरक हो। औरत को ऐसी दुनिया में हमेशा एक मर्द चाहिए। मेरे जानते इन तमाम मर्दों के बीच तुम्हीं एक अच्छे हो सुबल, जिसकी नीयत मुझे आदमी समझती है। तुम चले गए तो फिर मेरे सामने अँधेरा छा जाएगा।"

"मैं तो अजीब दुविधा के बीच जी रहा हूँ, भौजी !"

'यहाँ तुम्हें कोई कुछ कहता है, सुबल ?"

"नहीं, भौजी !" सुबल समझाने की चेष्टा करता है। "हम सभी मजूर हैं, दूसरों के लिए हल उठाए हुए मजूर। यहाँ इलाका तो गजब तरह से गर्म है। कुछ पता नहीं, कब देवकी चाचा की जान चली जाय।"

"वे तो तुम्हारे आने के पहले से ही भागे हुए हैं। वे होते तो शायद बहल जाते।"

"बहल नहीं जाता, भौजी। मैं तो जिन्दगी भर के लिए उन्हीं के साथ हो जाता।"

इलाके में भूमि-आन्दोलन जोरों पर है; जो जिले में गौरा आन्दोलन के नाम से अखबारों में प्रख्यात है। देवकी दास गौरा आन्दोलन की अगुआई कर रहे हैं। गौरा में साठ हजार इकट्ठी जमीन है। उस गैरमजरूआ जमीन पर कमजोर लोगों को बेदखल करते-करते भूपति अपना अधिकार

जमाते जा रहे थे। देवकी दास की लड़ाई ने इलाके के कोरा कदम सीखा दिया है। यहां दर्जनों जानें भूपतियों और पुलिस द्वारा ली गयी हैं। शहीद शिवनाथ प्रसाद ने गौरा आन्दोलन में अपनी पहली जान दी है। शिवनाथ ने गौरा में एक हाई स्कूल की स्थापना की थी और उस स्कूल के प्रधानाध्यापक भी थे। एक तरह से शिवनाथ प्रसाद ही गौरा आन्दोलन के जन्मदाता भी हैं। उन्होंने ही इलाके के भूमिहीनों, खेतिहरों को संगठित किया है। एक रोज शिवनाथ प्रसाद रात में साइकिल पर घर से लौट रहे थे। तभी जमींदार गुंडों ने उन्हें घेरकर बन्दूक से मार दी थी। उसी समय देवकी दास ने उनके खून का टीका अपने माथे से लगा लिया था और कसम खायी थी, मरते दम तक शहीद शिवनाथ प्रसाद का झंडा झुकने नहीं दूंगा। गौरा आन्दोलन जारी रहेगा।…अब तो गौरा में हजारों शिवनाथ प्रसाद पैदा हो गए हैं। एक शिवनाथ प्रसाद मारे गए तो एक दर्जन शिवनाथ प्रसाद तत्काल पैदा हो जाते हैं। पता नहीं, गौरा की वह साठ हजार एकड़ जमीन और कितने खून की प्यासी है। देवकीदास कई महीने से जेल में हैं। अभी जेल से छूटने की उम्मीद भी नहीं है।

कई लोग देवकी दास से मिलने के लिए शहर जेल पर जा रहे थे। उन्हें कहीं दूसरे जेल में भेजने की बात चल रही थी। आस-पास के कई लोग, रेवती के घर वाले, रेवती भी थी। मुवन भी उनके साथ चला गया था। वहां उनसे देर तक बातें नहीं हो पायी थीं। एक दूसरे का हाल-समाचार पूछने में ही समय हो गया था।

रास्ते में लौटते समय रेवती ने पूछा था, "तुम्हें चाचा कैसे लगे, मुवन ?"

"अब मैं इस गांव को छोड़कर कहीं नहीं जाऊंगा, भौजी।"

"सच कह रहे हो न !"

"मेरी तो यहां जिन्दगी ही बदल रही है।"

समय बड़ी तेजी से बढ़ता जा रहा है। रेवती मां बन गयी है। मुवन आन्दोलन में पूरी तरह रम गया है। राय-विचार के लिए साथियों के साथ मुवन भी देवकी दास के पास आना-जाना रहता है। रेवती बढ़ते हुए रूप में मुवन को देखकर फूले नहीं समाती है। भावना और विचार के

अनुरूप सुवल को पाकर रेवती हर तरह के समर्पण के लिए तैयार है। अब तो सुवल को अपना पति मान लेने पर भी उसके सतीत्व पर कोई आँच नहीं आ सकता।

क्या किसी स्त्री के दो पति नहीं हो सकते?

अगर होता होगा तो रेवती के भी हो सकता है। लड़का ठीक उन्हीं पर गया है। नाक-मुंह, रंग सब कुछ उन्हीं की तरह। 'वो' इसे देखकर कितने खुश होंगे। रेवती को जीने के लिए सहारा मिल गया है। अब सुवल ज्यादा उसके पास नहीं रहता तब भी चिन्ता-फिकिर की कोई वात नहीं है। यह लड़का भी तो देवकी चाचा के कदम पर ही जाएगा, रेवती का सपना पूरा हो गया है और लड़का अपने वाबू के गाँव लौटकर उन रावणों की शैतानी आँखें वरावर के लिए काढ़ लेगा जो दूसरों की वहू-वेटियों के इर्द-गिर्द काल की तरह घूरती रहती हैं।···रेवती का वेटा सच्चा मानस पुत्र है।

···ईआ जी कैसे होंगी! इच्छा होती है उन्हें वच्चे को दिखलाने के लिए रेवती एक घंटे के लिए भी गाँव चली जाय। परन्तु माई-वापू मना कर देते हैं। सवांग भी नहीं है कि मदद करेगा। उन्होंने वेटी को कैसे कसाई के गले में मढ़ दिया है। एक साल से ऊपर हो रहा है। मुदइया ने न कोई खोज-खवर ली न चिट्ठी-पत्री दी है। वह गाँव लौटकर आ ही जाय तव भी क्या मतलव है? ऐसे काहिल, लापरवाह, वेफिक्र, मरद पर वेटी को भेजकर ही क्या होगा!···वेटी विना किसी मरद के रह जाय, यही अच्छा है।

···सुवल भी लड़का वुरा नहीं है। अपने यहाँ भी इसकी अच्छे लोगों की संगति हो गयी है। इसके रहते रेवती के लिए दूसरा घर सोचने की जरूरत भी क्या है। अगर रेवती उसे चाह ले तो माई-वावू को क्या एत-राज हो सकता हैं।

एक रात को फूस वाली पलानी से सुवल के कराहने की आवाज सुनाई पड़ी थी। रेवती चौंकी थी। कई दिनों के वाद कहीं से आया था सुवल। यह भी तो भूपतियों की आँखें से वचता ही फिरता है। रेवती वेझिझक उठकर उसके पास सिरहाने जाकर खड़ी हो गयी थी।

"तुम कब आए सुबल ? यह तुम्हें क्या हो गया है।" रेवती उसके सिरहाने बैठ जाती है।

"बन्दूक चला दी थी न ?" सुबल फिर जोर से छटपटाता है।

"उफ !" रेवती चीखती है। "कैसे सुबल ? कहाँ पापी ने मार दी ?"

"गोली निकल गयी है, इस हाथ में। पट्टी बँधी है। कोई खतरा नहीं है। मगर रह-रहकर टीसता है।" सुबल अँधेरे में उसकी ओर पूरा हाथ बढ़ा देता है।

रेवती अनायास ही उसके हाथ को सहलाने लगती है। वह सुबल को बाहों में समेट कर देर तक पड़ी हुई थी और उसे गाढ़ी नींद भी आ गयी थी। लड़का जब रोने लगा था तो जगाने के लिए माई हड़बड़ायी उठी थी।···कहाँ चली गयी रेवती ? रेवती पलानी की ओर से दौड़ी थी, माई ने देख लिया था। भीतर-भीतर संतोष हुआ था, दोनों का मन मिलता है तो अच्छा है।

सुबह में लोग सुबल को उठाकर अन्दर ले गए थे, बाहर किसी के जानने का खतरा था। दुश्मन पुलिस में फौरन सूचना दे सकता था। माई भी उसे देखभाल करने के लिए रेवती से कई बार बोल गयी थी।

रेवती ज्यादा रात तक सुबल के करीब रहती है और माई बच्चे को सँभाले रहती है। कभी-कभी तो रात-भर सुबल के खटिया पर ही सोयी रह जाती है। अचानक भोर में हड़बड़ाकर उठती है और बाहर भागती है।

ईश्रा जी की खबर मिल गयी थी कि कनेश्रा को बबुआ हुआ है—ठीक नाक, रूप और रंग सुदेव से मिलता-जुलता। सुबह ही डाक मुन्शी एक लिफाफा दे गया है। रेवती लाज-शरम छोड़कर दौड़ती है और बाबू के हाथ से ले लेती है। कहीं 'उनकी' चिट्ठी तो नहीं है।···जल्दी-जल्दी लिफाफा फाड़ती है, यह तो रतनपुर से चिट्ठी आयी है, ईश्रा जी ने लिखवाया है। सुबल के पास चिट्ठी बाँचती हुई पहुँचती है। देख सुबल, ईश्रा जी ने क्या-क्या लिखवाया है। मेरे बाबू को चुम्मा-प्यार भेजा है। सुन ना ?"

रेवती सुबल के सिरहाने बैठकर सुनाने लगती है, "सोरमतो श्री सरब उपमा जोग लिखा ईश्रा जी की तरफ से कनेश्रा, सुबल और नमका बाबू

को आशीर्वाद पहुँचे। आगे कनेआ को मालूम कि बबुआ को देखने की बड़ी लालसा है। उसके बारे में एक चिट्ठी भरकर लिखना। कनेआ रे, ऊँच-नीच पैर कभी मत डालना। यहाँ लोग हँसी उड़ाते-उड़ाते ठंडा पड़ते जा रहे हैं। लेकिन शिवजी मालिक कहता है कि सुवला भौजाई को भगाकर ले गया और उसके नैहर में रहकर डकैती सीख रहा है। आगे तुम्हारे बाबू, चाचा सब खानदानी चोर, डकैत हैं क्या ? सो साफ-साफ लिखना। अगर ऐसी बात है तब तो सुवला की लाइन खराब हो जाएगी। शिवजी मालिक दीना बाबू तो यहाँ तक कहते हैं कि एक मुठभेड़ में सुवला को गोली लग गयी है। यह बात कहाँ तक सच है, कनेआ ? जल्द-से-जल्द लिखना। मेरा मन घबड़ाया हुआ है। यहाँ लोग यही कहते हैं कि तुम्हारे नैहर के जवार-पथार में अच्छे लोग नहीं रहते हैं। उनकी संगति में सुवला नामी गिरामी बनता जा रहा है। रास्ता चलना मुश्किल है। बाबू विदेसिया हो गए, वहीं जाकर बस गए···। सुवल को तुम्हारे नैहर में क्या हो गया है ? तुम पर ही तो भरोसा है, कनेआ। तुम उसे समझाती काहे नहीं हो।

"आगे कनेआ को मालूम कि शिवजी मालिक के खेत दुआर पर जाना मैंने भी छोड़ दिया है। अकेली तो हूँ रे ! काहे के लिए अपमान सहूँ ? रतनपुर के ही गृहस्थ की सेवा कर देती हूँ। वही सुबह-शाम के लिए थोड़ा चावल दे दिया करते हैं। मुझ अकेली के लिए इतना ही पेट पालने को बहुत है, कनेआ। बबुआ बैठता है कि नहीं ? कितने महीने का हो गया है ? सुवल को समझा-बुझाकर बुरा धन्धा छुड़वा देना। वह तुम्हारी बहुत इज्जत करता है। मैं ज्यादा क्या लिखूं। सो थोड़ा लिखना-ज्यादा समझना। चिट्ठी का जवाब जल्दी देना।"

चिट्ठी पढ़ते ही रेवती का चेहरा गम्भीर हो गया है। परन्तु सुवल तो भौजी की बेचैनी को लेकर घबड़ा रहा है। वह उठकर बैठने की कोशिश करता है, "चिन्ता हो गयी तुम्हें, न, भौजी ?"

"तो तुम्हारे गाँव में एक और हल्ला उठाया जा रहा है कि गोरा आन्दोलन चलाने वाले सभी गुंडा-डकैत हैं।"

"उन्हें मेरे लिए नहीं घबड़ाहट है कि मैं क्या कर रहा हूँ। उन्हें तो यह घबड़ाहट है कि हमारी तरफ भी वैसी ही घटना न होने लगे। उन्हें तो

अपनी ही चिन्ता सा रही है।"

"तनिक हाथ इधर बढा तो सुबल," रेवती उसका घायल हाथ सह-लाती हुई पूछती है। "अब तो घाव एकदम सूख गया न ?"

"पता नहीं, माई कैसी होगी।" सुबल के भीतर असह्य छटपटाहट महसूस होती है। "मुझे यहाँ से जाना चाहिए, भौजी।"

"फिर कब तक लौटोगे ?"

"कैसे कहूँ।"

"नहीं, नहीं···" रेवती उसका हाथ कस लेती है। "अभी कुछ दिन और रुको।···मुझे ईजा जी की याद आ रही है।"

"चल, भौजी। हम दोनों माई से मिलकर एक ही दिन में लौट आएँगे। माई बबुआ को भी अपनी नजर से देख लेगी।"

"सच !" रेवती आह्लाद से भर जाती है। "तब चलना आज ही।"

"हम कल भोर में उठते ही चल देंगे।"

"तुम्हें थाहूचक वालों ने देखते हुए पुलिस को बता दिया तब ?"

"हम मुँह अँधेरे ही यहाँ से निकल जाएँगे।"

वे शाम को रतनपुर पहुँचे थे। गाँव में फिर सनसनी फैल गयी थी। ईजाजी ने लपककर रेवती की गोद से बच्चे को लिया था और चूमते-चूमते उसका मुँह लाल कर दिया था। उन्होंने छूटते हुए पूछा, वहाँ जाकर कैसी संगति में पड गया रे, सुबला ? यहाँ रतनपुर में जोरों का हल्ला है कि तू नामी लुटेरा निकल गया है और तुम्हारा नाम खबरों में छपता रहता है।"

रेवती हँसती है। "हमारा सुबल तो बहुत अच्छा काम कर रहा है, ईजा जी। तुम उन बदमाशों की बात का विश्वास क्यों करती हो ?"

"सुबला को गोली लगी थी न ?"

"लगी थी।" सुबल उत्तर देता है, "लेकिन हर गोली खाने वाला गुंडा-बदमाश ही होता है क्या ? आज कल तो बात ही उलट गयी है। अच्छा आदमी अपनी इज्जत, अधिकार चाहता है तो उसे गोली खानी ही पड़ती है।"

पता नहीं, माई को ठीक-ठीक सुबल समझा पा रहा है कि नहीं। परन्तु माई फिर पूछती है, "गोरा में कैसा मामला है, कनैआ ?"

"साठ हजार एकड़ जमीन की लड़ाई है।"

"साठ हजार एकड़ ! बाप रे इतनी जमीन पचाने वाला कोई राकस ही होगा, कनेआ ?"

"राक्षस से भी खतरनाक, ईआ जी।" रेवती का लड़का घुटने के बल ओसारे में रेंगने लगता है। वह लपककर उसे उठा लेती है। "इसे आशीर्वाद दो ईआ जी, कि तुम्हारा पोता सुवल का दाहिना हाथ बने।"

"इसका मतलब क्या हुआ, कनेआ। मुझे साफ-साफ समझा दे।"

"इसका मतलब हुआ ईआ जी, तुम्हारे लड़के कभी भी गलती के सामने नहीं झुकें।"

'पता नहीं, रानीगंज-झरिया में वावू के साथ वहाँ के लोग कैसा सलूक करते होंगे।"

"वो भी तो आप ही के खून हैं न, ईआ जी। 'वो' किसी भी गलती को वर्दाश्त नहीं करते होंगे। इसीलिए न उन्हें आने के लिए फुर्सत मिलती होगी, न चिट्ठी-पत्री ही लिखने की फुर्सत मिलती होगी।"

ईआजी चिन्तित हो जाती हैं! वावू को कहीं इसी तरह राक्षस ने घायल कर दिया हो तब ?···अँधेरे में आंसू लगातार गिरते हैं। डेढ़ साल के लगभग हो रहे हैं। अब वावू कब आएँगे।···अस्पताल में भी होंगे तो वहाँ से भी नाम कट गया होगा! ···

ईआ जी सुदेव के वेटे को छाती से चिपकाए सोयी हुई हैं। गोदावरी दीवार की 'मुरकी' से रेवती को जगाती है। 'जाग रही हो, भौजी कि सो गयी हो?' धीमी-आवाज में गोदावरी फुसफुसाती है।

"क्या है, ननद रानी? अच्छी तरह हो?"

"सव ठीक है, भौजी। मगर अभी वावू कह रहे थे कि रतनपुर से एक आदमी थाने में गया है।"

"काहे के लिए गोदा ननद?'

"तुम्हारे लिए, सुवल के लिए···"

"सचमुच!"

"हाँ, भौजी।"

रेवती आँगन में सुवल को जगाती है। "अरे उठ, सुवल। हमारी

खबर पुलिस को हो गयी है। तुम को और भी भारी खतरा हो।"

"तुम्हें कैसे जानकारी हुई है ?"

"गोरा मुरकी से कह रही थी।"

"फिर तो यहाँ एक पल के लिए भी टिकना ठीक नहीं। पुलिस रात में भी आ सकती है।"

"चलो, हम अभी निकल चलते हैं।"

ईआ जी हठात् बिछड़ने की खबर से फूट-फूटकर रोती हैं। वे बच्चे को कंधे पर सुलाए सीवान तक छोड़ने के लिए आती हैं।

जीप की सरसराहट सुनायी पड़ रही थी। सचमुच, पुलिस को खबर हो गयी थी। वे दौड़कर बगीचे में पेड़ों की आड़ में हो गए थे। और जीप सरसराकर टोले की ओर निकल गयी थी।

"रो मत, माई। मैं बराबर तुम्हारी खोज-खबर के लिए आता रहूँगा।"

"झूठ नहीं बोल रहा है, सुबल ?"

"नहीं, माई ! मैं सच कहता हूँ।"

'कनैआ के बबुआ को साथ में लाएगा न ?"

"लाऊँगा। अब तू जा। पिछवाड़े से पहुँच जा। उनके पहुँचने के पहले घर के अन्दर चली जाना। कुछ पूछे तो बता देना, यहाँ कोई नहीं आया था। यह भी पूछे कि सुबल और उसकी भौजी कहाँ रहते हैं तब भी कहना कि मुझे नहीं मालूम।"

"फिर कब आओगे, सुबल ?"

"मैं बराबर आऊँगा। तू जा न ?"

माई रोती-कलपती लौटती है।

रेवती और सुबल अँधेरों को चीरते हुए भाग रहे हैं। अपने जवार-पथार के रात्रि-सन्नाटे में भी चिर-परिचित झंकार है जो भयावह होते हुए भी आत्मीय लगती है।

आधी रात लगते-लगते वे खैरा पहुँच गए हैं।

"यहाँ से छः बजे सुबह बाबूबक के लिए बस मिलती है, भौजी।" दोनों एक बंद ढाबे में बैठते हैं।

"तुम्हारे लिए वहाँ दिन में पहुँचना ठीक नहीं है।"

"मैं रात में कभी आऊँगा।"

"नहीं, नहीं।" रेवती घबराती है। "मैं तुम्हें अभी अकेले नहीं जाने दूंगी। तुम्हें मेरे साथ चलना होगा। पता नहीं, तुम कितने दिन बाद आओगे।"

"कुछ काम रह गया है। उसे पूरा करते ही जल्दी आ जाऊँगा।" सुबल उसे बोलता है।

"अब तो ऐसा हो गया है सुबल, कि तुम्हारे बिना मन एकदम नहीं लगता। थोड़ा बबुआ दौड़ने-घूमने लग जाए। बस, मैं भी तुम्हारे ही साथ आन्दोलन में रहूंगी। रक्खोगे ?" रेवती कहकर हँसती है।

"तुम्हारी ही अगुआई में तो मैंने थोड़ा-बहुत सीखा पढ़ा है। जिसका चाचा इतना बड़ा नेता हो उसे रखने, न रखने का सवाल ही कहाँ है ?"

"एक बात पूछती हूं, सुबल ! बताना, सच-सच बताना।"

"क्या बात है, भौजी।"

"अगर तुम्हारा बच्चा मेरे पेट में रह गया तब क्या होगा ?"

सुबल अचकचा जाता है—"अरे ! ऐसा क्यों होगा ?"

"क्या होगा ?"

इसी तरह बात करते, हँसते-बोलते सुबह हो गयी थी। बस अपने समय से ही ठीक छः बजे खुलने वाली थी। रेवती बस में एक किनारे बैठ गयी थी और अपने बच्चे के साथ हँस रही थी।

बस जब तक खुली नहीं थी, सुबल चौकन्ना खड़ा था।

सामने सुबल की नजर दौड़ती है। वह चौंक जाता है। दीना बाबू का लड़का कुछ सामान के साथ बैलगाड़ी से उतर रहा है। तो क्या वह शहर जा रहा है ? यह बस शहर से होकर ही जाती है क्या ? कनडक्टर से पूछ-ताछ के बाद उसे इत्मीनान हो जाता है। फिर इस दैत्य के साथ भौजी को अकेली छोड़ना ठीक नहीं है। अब चाहे जो भी हो, भौजी के साथ जाना ही पड़ेगा।

वह चुपचाप जाकर रेवती के बगल में बैठ जाता है।

"आखिर मन नहीं ही माना न," रेवती हँस पड़ती है, "मेरे साथ

वलना तय कर लिया न ? चलो, जो होगा हम दोनों मिलकर देख लेंगे।"

"ऐसी बात नहीं। कुछ और बात है।" सुबल उसे इशारे से बतलाता है। 'उधर दिखलाई पड़ता है कुछ ?"

"अरे!" रेवती चौंकती है, "यह पापी कहाँ से आ गया रे ?"

"अभी बैलगाड़ी से उतरा है।"

"तब हाथ में सूटकेस और झोला लेकर कहाँ जा रहा है ?"

"तुम्हें किस तरह मालूम ?"

"देखती नहीं, इसी तरफ आ रहा है।"

"हमसे कुछ बोला तो हम दोनों मिलकर उसे मजा चखाएँगे।'

"ताकने की साले को हिम्मत नहीं। चलो, अब मैं भी चलती हूँ।"

''रेवती भीतर-भीतर खुश हो रही है।

"शहर में उतरकर किधर जाओगे ?" वह पूछती है।

"यह जहाँ भी उतरेगा न, इसी के साथ उतरूँगा।"

"इससे लड़ोगे ?"

"नहीं, नहीं। तुम्हारे लिए निश्चित रहना कि खतरा टल गया है।"

रेवती हँसती है। उन्हें आपस में हँसते देखकर बच्चा भी किलकारियाँ भरने लगता है।

बस खुल गयी है। वे दीना बाबू के लड़के की ओर से ध्यान और नजर खींचकर आसपास के दृश्यों में खोए हुए हैं। सोन नदी के किनारे-किनारे बस भागती है। रेवती बाहर झाँकती हुई सोचती जा रही है, अगल-बगल के लोग यही सोचते होंगे न, कि दोनों पति-पत्नी हैं। कैसा भाग्य है रेवती का भी। सुबल की ओर वह अनायास ही खींचती कैसे चली गयी है। विदेसी सुनेंगे तो क्या सोचेंगे ! सुबल ने गाढ़े समय में रेवती की इज्जत बचायी है। कायर की तरह चुप्पी साध लेता तो पंचायत के दिन ही लोग उसे बुलवाकर पता नहीं क्या-क्या करते।···अब तक कहाँ-कहाँ भटकती रहती रेवती ! ···सुबल तो उन्हीं का प्रतिरूप है न !

शहर में चौक पर दीना बाबू के लड़के के साथ-साथ सुबल भी उतर गया था। और बस चौक से होकर फिर गाँव की ओर बढ़ गयी थी।

८

लड़का पाँव-पांव आगे दौड़ता है और रेवती पीछे-पीछे उसे छूने के लिए दौड़ती है। ज्यादातर माँ-वेटे खलिहान में निकल जाते हैं और राजा-चोर, मालिक-किसान के खेल खेलते रहते हैं। आस-पास के दूसरे-दूसरे लड़के भी आ जाते हैं। 'वो' होते तो देखते उनका वेटा कितना वड़ा हो गया है। वह तुतला-तुतलाकर बोलने भी लगा है। गिनती और समूचा ककहरा उसे याद है। सुवल को ही वावू कहता है, सुनकर 'वो' वुरा तो नहीं मानेंगे? इसमें वुरा मानने की वात ही क्या है? वावू, दादा किसी को कहे, लेकिन है तो उन्हीं का न!

सामने से रेलवे-लाइन गुजरती है। वरावर कोई-न-कोई रेल जाती है। जब-जब रेवती रेल को देखती है उसे परदेसी पिया की याद आने लगती है।

रेलिया ना वैरी,
जहजिया ना वैरी,
वैरी पइसवा हो राम...।

सुवल भी कई दिनों वाद परसों आया था, रात में अचानक। उससे देर तक वात नहीं कर सकी थी। वह वहुत जल्दी सो गया था। सुवल पास में होता है तो उसी में खोयी रहती है। 'वो' तव वहुत कम याद आते हैं। परन्तु एकान्त में उसके कलेजे की मजवूती नहीं रह पाती। 'वो' घाव की तरह टीसने ही लगते हैं।

वावूचक की एक औरत ने रेवती की माई से पूछ दिया था, "रेवती का दूल्हा कभी आएगा भी या...।"

"हम कैसे कहें?"

"सुवल घर रह जाएगी क्या?"

रेवती की माई ने जवाव दिया था। "रह भी जाएगी तो क्या हो जाएगा। वह आज दो-ढ़ाई साल हो गया नहीं लौटा तो वेचारी रेवती क्या

करेगी? हम जवान बेटी का आचार नहीं डालते। हम गरीब लोग जल्दी पुरुष की छाया कर देते हैं। उसे जिन्दा रखने के लिए फिर दूसरा कोई सहारा नहीं है।"

वह औरत आगे कुछ नहीं बोली थी। रेवती की माई के इस जवाब के बाद दूसरा सवाल भी क्या हो सकता था! वह तो खुद राजी है, बेटी को देवर के सहारे छोड़ने के लिए तैयार है। रेवती का सवाँग भी तो गजब का मनहूस है—एकदम आमनुष। उसे कोई फिक्र-चिन्ता नहीं कि घर में एक जवान औरत छोड़कर आए हैं। वह अकेली कैसे रह रही होगी। रेवती की मतारी तो मन-ही-मन तय कर चुकी है, चाहे जो हो रेवती का अब देवर के साथ घर बसा ही दिया जाए। रेवती का भी देवर भीतर से एकदम आ गया है। मतारी ने कई रात दोनों को एक-दूसरे की गर्दन में बाँह डालकर सोया देख लिया है और परहेज कर गयी है। फिर देवर भी तो 'सुराजी' ही है—एकदम रेवती के परिवार के ही अनुकूल।

एक दिन रेवती की माई भी रेवती के साथ ही सुबल के खाते समय सामने बैठ गयी है। सुबल सकुचा रहा है। पहली बार घर की बड़ी-बूढ़ी सुबल के सामने-सामने बैठी है। कोई बात है क्या? क्या बात है। वह बार-बार रेवती की ओर कनखियों से देखता है। रेवती मुस्कराकर लजा जाती है। सुबल की आँखें जैसे रेवती से पूछ रही हों—बोल न भौजी! आज क्या बात है कि तुम्हारी मतारी सामने आकर बैठ गयी है। मुझे खाने में संकोच हो रहा है। जल्दी बता ना? लेकिन रेवती तो बहुत हल्के सिर हिलाकर इंकार करती हुई हँस देती है और जमीन की ओर ताकने लगती है।

"एक बात कहती हूँ, सुबल बेटा!" रेवती की माई अचानक बोलती है, "इन्कार मत करना, बबुआ।"

"कैसी बात है, माई जी!" सुबल का मुँह चलना रुक जाता है और आँखें थाली पर टिकी रह जाती हैं।

"रेवती की दूसरी देह है, बबुआ दुनियाँ की नजर में अलग-अलग रहने से क्या फायदा? अब दुनिया को भी बता ही देना चाहिए कि तुम दोनों औरत-मरद हो।"

द

लड़का पाँव-पाँव आगे दौड़ता है और रेवती पीछे-पीछे उसे छूने के लिए दौड़ती है। ज्यादातर माँ-बेटे खलिहान में निकल जाते हैं और राजा-चोर, मालिक-किसान के खेल खेलते रहते हैं। आस-पास के दूसरे-दूसरे लड़के भी आ जाते हैं। 'वो' होते तो देखते उनका बेटा कितना बड़ा हो गया है। वह तुतला-तुतलाकर बोलने भी लगा है। गिनती और समूचा ककहरा उसे याद है। सुबल को ही बाबू कहता है, सुनकर 'वो' बुरा तो नहीं मानेंगे? इसमें बुरा मानने की बात ही क्या है? बाबू, दादा किसी को कहे, लेकिन है तो उन्हीं का न!

सामने से रेलवे-लाइन गुजरती है। बराबर कोई-न-कोई रेल जाती है। जब-जब रेवती रेल को देखती है उसे परदेसी पिया की याद आने लगती है।

रेलिया ना वैरी,
जहजिया ना वैरी,
वैरी पइसवा हो राम...।

सुबल भी कई दिनों बाद परसों आया था, रात में अचानक। उससे देर तक बात नहीं कर सकी थी। वह बहुत जल्दी सो गया था। सुबल पास में होता है तो उसी में खोयी रहती है। 'वो' तब बहुत कम याद आते हैं। परन्तु एकान्त में उसके कलेजे की मजबूती नहीं रह पाती। 'वो' घाव की तरह टीसने ही लगते हैं।

बाबूचक की एक औरत ने रेवती की माई से पूछ दिया था, "रेवती का दूल्हा कभी आएगा भी या...।"

"हम कैसे कहें?"

"सुबल घर रह जाएगी क्या?"

रेवती की माई ने जवाब दिया था। "रह भी जाएगी तो क्या हो जाएगा। वह आज दो-ढ़ाई साल हो गया नहीं लौटा तो बेचारी रेवती क्या

करेगी ? हम जवान बेटी का आचार नहीं डालते। हम गरीब लोग जल्दी पुरुष की छाया कर देते हैं। उसे जिन्दा रखने के लिए फिर दूसरा कोई सहारा नहीं है।"

वह औरत आगे कुछ नहीं बोली थी। रेवती की माई के इस जवाब के बाद दूसरा सवाल भी क्या हो सकता था ! वह तो खुद राजी है, बेटी को देवर के सहारे छोड़ने के लिए तैयार है। रेवती का सवांग भी तो गजब का मनहूस है—एकदम भामनुप। उसे कोई फिक्र-चिन्ता नहीं कि घर में एक जवान औरत छोड़कर आए हैं। वह अकेली कैसे रह रही होगी। रेवती की मतारी तो मन-ही-मन तय कर चुकी है, चाहे जो हो रेवती का अब देवर के साथ घर बसा ही दिया जाए। रेवती का भी देवर भीतर से एक-दम आ गया है। मतारी ने कई रात दोनों को एक-दूसरे की गर्दन में बाँह डालकर सोया देख लिया है और परहेज कर गयी है। फिर देवर भी तो 'सुराजी' ही है—एकदम रेवती के परिवार के ही अनुकूल।

एक दिन रेवती की माई भी रेवती के साथ ही सुबल के खाते समय सामने बैठ गयी है। सुबल सकुचा रहा है। पहली बार घर की बड़ी-बूढ़ी सुबल के आमने-सामने बैठी है। कोई बात है क्या ? क्या बात है। वह बार-बार रेवती की ओर कनखियों से देखता है। रेवती मुस्कराकर लजा जाती है। सुबल की आँखें जैसे रेवती से पूछ रही हों—बोल न भौजी ! आज क्या बात है कि तुम्हारी मतारी सामने आकर बैठ गयी है। मुझे खाने में संकोच हो रहा है। जल्दी बता ना ? लेकिन रेवती तो बहुत हल्के सिर हिलाकर इंकार करती हुई हँस देती है और जमीन की ओर ताकने लगती है।

"एक बात कहती हूँ, सुबल बेटा !" रेवती की माई अचानक बोलती है, "इन्कार मत करना, बबुआ।"

"कैसी बात है, माई जी !" सुबल का मुँह चलना रुक जाता है और आँखें थाली पर टिकी रह जाती हैं।

"रेवती की दूसरी देह है, बबुआ दुनियाँ की नजर में अलग-अलग रहने से क्या फायदा ? अब दुनिया को भी बता ही देना चाहिए कि तुम दोनों औरत-मरद हो।"

रेवती लजाकर अपने हाथ में लोटा रख लेती है और वहाँ से उठ जाती है।

सुबल सिर झुकाए ही बोलता है, "मुझसे गलती हो गयी है, माई जी ! मैंने भौजी के साथ···"

"अब जो हो गया, सो हो गया।" रेवती की माई आगे कहती है, "अब तुम रेवती के साथ ब्याह रचाकर रहो। इसके सवाँग के लौटकर आने की उम्मीद नहीं है।"

"ऐसा न कहें, माई जी ! भइया जरूर आएँगे।"

"अब तीन बरिस में नहीं आए तो अब क्या आएँगे। बिदेसिया सवाँग ऐसा ही छली होता है। परदेस में ही कोई सवतिन रख लेता है।"

सुबल ज्यादा तर्क क्या दे सकता है। रेवती के पेट में नया शिशु तो इसी का पल रहा है। ब्याह तो रचाना ही होगा। अपनी माई भी मन-ही-मन राजी है। भइया आ गये तो फिर भौजी को उन्हें सौंप देंगे। वह झट-से उत्तर देता है, "आप लोग हैं तो भौजी से ब्याह कर लूंगा।"

रेवती की मतारी बहुत देर तक वहाँ नहीं रुकी, हँसती हुई रेवती को पुकारने के बहाने वहाँ से उठ जाती है। सुबल कुछ असमंजस झेलने की स्थिति में घबड़ाकर उठना ही चाहता है कि रेवती लोटे में पानी लेकर फिर आ जाती है। उसके हाथ से लोटा सँभालते ही सुबल पूछता है, "माई जी की बातों पर राजी हो, भौजी ?"

"तुम्हारी राय क्या है, सुबल ?"

"मुझे तो खाली भइया का डर लगता है।"

"उस दिन तुम्हें डर नहीं लगा था सुबल, जब तुम मेरे पेट में नए शिशु को जन्म दे रहे थे ?"

सुबल अवाक् रह जाता है।

मगर रेवती हँस देती है, "कायर कहीं का। उस दिन देखा जाएगा।"

"किस दिन ?"

"जिस दिन बिदेसिया लौटकर आएगा।"

"भइया को मनाने में साथ दोगी ?"

"उन्हें हम दोनों राजी कर लेंगे।"

रेवती का लड़का पता नहीं कब दोनों के बीच में खड़ा हो गया है। रेवती अपने बेटे से पूछती है, "बाबू रे ! ये तुम्हारे कौन हैं—बाबू हैं कि चाचा···!"

'धत् !" लड़का बीच में ही काट देता है, "बाबू तो परदेस गए हैं। ये तो सुबल चाचा हैं।"

रेवती हँसती हुई उसे अपनी गोद में खींच लेती है और उसके गालों पर अपने होंठ रगड़ती हुई पूछती है, "वह रमलगना तो अपने चाचा को भी बाबू कहता है न ?"

"तब तुमने मुझे पहले सिखलाया क्यों नहीं ?"

"रेवती और सुबल हँसते हैं।

रात में सुबल से वह पूछती है, "आज से तुम मेरे पति हो, अब से मुझे भौजी के बदले क्या कहोगे ?"

"मेहरारू कहूँगा, और क्या ?"

"मेहरारू कहकर पुकारोगे ?"

"तुम मुझे भौजी कहोगे और मैं तुम्हें सुबल, तो टोला-पड़ोस के लोग क्या कहेंगे ? मैं तो तुम्हें सुराजी पिया कहूँगी। और तुम ?" कहकर रेवती बड़े जोर से हँसती है।

"हम लोग यही पुराने नाम से एक-दूसरे को बुलाएँगे।"

रेवती चुपचाप खटोले पर पड़ी हुई है। आकाश में कोई बत्ती की तरह तारा सरकता हुआ जा रहा है। रेवती सोचती है, यह तारा नहीं होगा, तारा तो स्थिर है। सुनती है कि लोग इस पर चन्द्रलोक, सूर्यलोक में घूमते हैं। अपने 'वो' को इस जमाने में कोई साधन नहीं मिला कि अपने बारे में कोई खबर भी करते। यही लिख देते कि जेल में हैं। अब तो जेल के बाहर ही ज्यादा बुरे लोग हैं। जिन्हें जेल में रहना चाहिए वे ही तो हमारे गाँव के सरगना बने हैं और अपराध और मौज दोनों काम एक साथ कर रहे हैं।

"सुन भौजी ! मुझे एक नाम अभी सूझ गया है।" सुबल अचानक बोलता है।

"कैसा नाम ?" उल्लास और अँधेरे में रेवती उसकी ओर कनखियों से ताकती है।

"यही कि बड़े बाबू का नाम लव और होने वाले का कुश। कैसा लगा ?"

"लव-कुश। यह तो एकदम जुड़वा नाम है। बड़ा प्यारा है।"

"सीता के लड़के का भी यही नाम था।"

"कौन सीता ?"

"वही रामायण वाली सीता।" और, सुबल अँधेरे में उसका हाथ टोलते हुए खींचता है, "मगर तुम तो जिन्दगी वाली सीता हो। वह सीता भी तो तुम्हारी ही तरह मजूर की बेटी थी। उसके बाबू भी तुम्हारे बाबू की तरह जंगली रावण से लड़ते थे। खाली उस सीता के मरद राजा राम थे। और तुम्हारे···"

"सुराजी राम हैं।" रेवती उसकी बात बीच में काटती हुई फिर जोर से हँस देती है। "मगर एक बात है, सुबल ! हमारे लव-कुश के तो एक बाप राम हैं, दूसरे के लक्ष्मण होंगे।"

"लव हमारी बातें सुन रहा होगा, भौजी।"

"लव सो रहा है। कुश हमारी बातें सुन रहा होगा। तुम देख लेना, हमारे लव-कुश जरूर तुम्हारे रास्ते पर चलेंगे।"

"चलना पड़ेगा, भौजी। पूरी घटिया परम्परा को बदलना है। तुम्हारा तो मेरी जिन्दगी पर बहुत बड़ा असर है। तुम एक साथ मेरी गुरु, दोस्त, भौजी, पत्नी—सब कुछ हो।"

थोड़ी देर दोनों के बीच गहरा सन्नाटा रहता है। परन्तु रेवती ही पहले सन्नाटा तोड़ती है। "अगर तुम्हारे भइया लौटकर आए तो मैं अग्नि-परीक्षा नहीं दूंगी। मैंने तुम्हें पति स्वीकार कर कोई गलत काम नहीं किया है।"

"मेरा भइया कमजोर नहीं है, भौजी। वह आते ही तुम्हें स्वीकार कर लेगा।"

"स्वीकार करना पड़ेगा, सुबल ! तभी मैं जानूंगी कि वह असली मरद है।···उसे जानने-पहचानने का मौका ही कहाँ मिल, सुबल ! वह हफ्ता भर ठहरने के बाद ही तो परदेस चला गया। तब से तो मैंने तुम्हीं में उसे देखा है। तुम्हीं से मैं अनुमान लगाती हूँ कि वह भी तुम्हारी ही तरह मजबूत

और असल होगा।…"वह जरूर मजबूत और असल होगा।…"

रेवती बोलते-बोलते गम्भीर हो गयी है। रात का कुछ भी अता-पता नहीं है। मगर उन्हें सुबह का भी ऐसा कोई खास इंतजार नहीं है।

एक ही सप्ताह बाद रेवती के नैहर में एक हल्का-सा समारोह हुआ। टोला-पड़ोस के कुछ निकटवर्ती लोग 'भोज' पर आए। वहीं यह विधिवत् घोषणा रेवती के बाबू ने कर दी कि रेवती ने देवर सुबल के साथ घर बसा लिया है। रेवती को तत्क्षण ध्यान आता है, इस मौके पर ईआजी होतीं तो कितना अच्छा था। 'कोहबर' की ही रात वह ढिबरी जलाकर लिखने बैठ जाती है,…"आगे ईआजी को मालूम कि आज से मैंने सबके सामने देवर को पति मान लिया है। इसका मतलब यह बिल्कुल नहीं है ईआजी, कि मुझे 'उनकी' ओर से किसी भी प्रकार की विरक्ति हो गयी है। मेरे लिए अब उनमें और देवर में भेद कर पाना बड़ा मुश्किल है।…मुझे पूरा भरोसा है कि आप सामने होतीं तो दिल से हम दोनों को आशीर्वाद देतीं।…एक बात और! छिपाने से क्या फायदा, ईआजी!…देवर से पेट में लड़का रह गया है। देह छूटते ही दोनों बाबू—लव-कुश को लेकर चरण छूने आऊंगी। रतनपुर के बाबुओं का जुलुम नरम है कि अभी उसी तरह है? यहाँ तो लड़ाई जमकर चल रही है। चाचा को एक मामले में सात-साल की सजा हो गयी है। अभी इनके ऊपर दो-तीन और मामले हैं। गौरा में बड़ी तेज लड़ाई है। उनकी बन्दूक की बलि चढ़ने के लिए सैकड़ों जवान तैयार हैं, इनमें हमारा सुबल भी एक है। अभ्यास के कारण सुबल का नाम कहा जाता है। यह तो मेरा मरद है। नियम के अनुसार इसका नाम मुँह से नहीं निकालना चाहिए। ईआजी! मेरे मन पर यह सब नियम-पुराण एकदम नहीं जमता।…दूसरे बाबू दो ही तीन महीने के भीतर घर में आने वाले हैं। इस रात को ज्यादा क्या लिखूँ…। थोड़ा लिखना, ज्यादा समझना है। हां, एक बात तो छूट ही रही थी, आगे ईआजी को मालूम है कि गोदावरी गाँव पर ही है या ससुराल चली गयी है। उसकी याद बहुत सताती रहती है।"

अचानक कलम रखकर रेवती जैसे ढिबरी फूंकने के लिए मुंह घुमाती है कि कानों में अनायास ही कई मधुर स्वर गूंजने लगते हैं। आँगन में

खड़ा झाड़-झंखाड़ नीम का पेड़ सरसराकर हिलता है और रेवती के होंठ अचानक ही सोहर गुनगुनाने लगते हैं,

मचिया बइठल मोर सासू सरब गुन आगर हो
हँसिए बात पुछली हो···
बहुआ कवन बरत कइलू, बबुलवा बड़ा नीमन,
होरिलवा बड़ा सुनर हो···

सुबल की नींद अचानक फक से खुल जाती है। ढिबरी की रोशनी में रेवती का दीप्त चेहरा और भी प्रज्वलित हो उठता है। उसके होठों को चूमते हुए पूछता है, "यह क्या भौजी···"

"चुप्प !" रेवती उसके मुंह बन्द कर देती है, "अब भौजी कहाँ ? 'वो' लौटकर आ गये तो फिर देखा जाएगा।"

"बहुत अच्छा गाती है तू।"

"सचमुच !" रेवती का उल्लास कनेर की तरह और भी खिल उठता है, "अपने बाबू के अगवानी में सोहर गुनगुना रही थी।"

"आधी रात को ?"

"ऐसे ही, होंठ गुनगुनाने लगते तो मैं क्या करती···"

"आगे सुनाना, मुझे भी अच्छा लगता है।"

"सुना।" रेवती आगे की कड़ियाँ फिर गुनगुनाने लगती है,

"कातिक मासे बरत छठ कइलीं, अगहन मासे एतवार
इहे ब रत हम कइलीं हो सासुजी,
बबुलवा हमार नीमन, होरिलवा हामार सुनर हो···"

"माई की याद आ गयी।" सुबल उठकर बैठ जाता है। "तुम्हारा सोहर बड़ा मनभावन है। अपनी सास से तुम गोहार-गोहारकर बतिया रही है। अब मुझे नींद कहाँ से आ सकती है।"

"तू घबड़ा नहीं। मैंने चिट्ठी में ईआजी को सब समाचार लिख दिया है।"

"और क्या लिख दिया है ?"

रेवती ढिबरी फूंकती है। बाहर की तरह अन्दर भी अन्धेरा हो जाता है। रेवती उसका हाथ खींचकर सुला देती है, जैसे दुधमुंहे बच्चे को बांध

रही हो, "सो जा। हम ईआजी से मिलने तीसरा महीना उतरते ही चलेंगे।"

"मैं तो सुबह उठते ही जाऊँगा।"

"अकेले ?"

"तुम्हारा विचार है तो त भी चल सकती है। मगर ऐसी हालत में कैसे चलेगी तू ? तुम्हारे पाँव तो बहुत जल्दी भरभराने लगेंगे।"

"क्या समझता है तू महतारी वह खाली तुम्हारी हैं, मेरी नहीं हैं ?"

"सोचो ना, माई से मिले मुझे कितने दिन हो गए हैं ?"

"इस चिट्ठी का जवाब आते ही चलेंगे। तुम सो जाओ, मैं गुनगुनाती हूँ।"

"माई का जवाब कौन लिखेगा, यह कभी सोचा है ? अपने सभी तो रतनपुर वालों के जुलुम से गाँव छोड़-छोड़कर भाग रहे हैं।"

'अनायास रेवती के सामने यथार्थ नंगा नाचने लगता है और उठकर बैठती हुई ऐसे छटपटाती है जैसे रतनपुर अभी दौड़कर चलने के लिए तैयार हो। वहएलान करती है, "सुनो। हम दोनों सुबह ही चलेंगे।"

"तुम भी चलोगी ! वह भी इस हालत में ?"

"तुम्हारी बहू होने के बाद पहली बार गाँव चलूँगी। तुम अकेले कैसे जाओगे ? हम यहाँ माई-बाबू से विदाई लेकर चलेंगे।"

सुबल चुप लगाता है।

"क्या सोचने लगे ?" रेवती फिर टोकती है।

"सोचता हूँ, धधकती आग में तुम अभी नहीं चलो।"

"क्या बकते हो। शरम नहीं आती ? मुझे छोड़कर अकेले जाओगे ?' रेवती को सचमुच का गुस्सा चढ़ता है।

आखिरकार दोनों का समझौता हो जाता है और सुबह सास-ससुर से विदाई लेकर रेवती के साथ गाँव चलने के लिए राजी हो जाता है। रेवती ईआजी के नाम लिखी हुई चिट्ठी मोड़ कर आँचल के एक कोने में पाहुर की तरह बाँध लेती है। ईआजी से मिलने की आशा में उसके भीतर अजीब उल्लास है। रात भर बतियाने के लिए सुबल को बार-बार जगाती है। ढिबरी जलाकर चिट्ठी सुबल को कई बार सुनाती है।

दूसरे दिन रात में आठ-नौ बजे के लगभग हीरामन दास की बैलगाड़ी रतनपुर के सीवान पर पहुंचते ही रेवती हहास बांधकर घर की ओर भागती है और ईआजी के पांव छानती हुई फफक-फफककर रो पड़ती है। ईआजी की आंखें भी बांध सँभाल नहीं पाती हैं, वे सिसकती हुई बोलती है, 'तुम दोनों हमें महाघार में छोड़कर कहाँ चली जाती हो, कनेआ ? यहाँ अकेले लोहा लेते-लेते मन घबड़ा गया है। टोले के आधा आदमी इधर-उधर भाग गये हैं। लेकिन जो भी रह गए हैं, उन्हें समझ लो कनेआ, लोहा हैं—लोहा ! शैतानी आंख से अब डरने वाले नहीं हैं। उन आंखों को भी काढ़ लेने की हिम्मत रखते हैं। खाली डर लगता है तो पुलिस से। सुनती हूँ, पुलिस के सारे लोग उन्हीं के आदमी हैं। पुलिस आंख मूंदकर उन्हीं की मान लेती है और हमें जब तब तंग करती रहती है।···कैसे बताऊं रे कनेआ। मुझे भी तुम्हारे अतापता के लिए थाने में भूखे-प्यासे तीन-चार दिनों तक एक बार बन्द कर दिया गया था। मगर बेटी, जो हिम्मत तुमसे मिली है वही तो मेरे पास पूंजी रह गयी है···"

ईआजी अपने आँसू रोक नहीं पा रही हैं, और लव को गोद में उठाकर बार-बार चूम रही हैं। रेवती भी अपने आँसू बटोरती हुई जबाव देती हैं, "अंचरा में सब बात बांध कर रखी हैं, ईआजी। मैंने दूसरा घर कर लिया है। मेरा मरद साथ में खड़ा है। ईआज़ी के पांव छूते काहे नहीं तुम ?" वह सुबल की ओर इशारा करती है।

सुबल लपककर माई के पांव छूता है।

"कैसी हो, माई।" वह पूछता है।

"अच्छी हूँ, बबुआ।"

"घर में अँधेरा काहे है ?"

"अभी-अभी चबूतरे पर ढिबरी बुझाकर सोयी हुई हूं। रुकना, तुम दोनों और इस बबुआ के लिए कुछ पक़ाती हूं।"

"नहीं, ईआजी।" रेवती रोकती है, "हमारे पास चूड़ा-गुड़ है। हम उसी को भीगोकर खा लेते हैं।"

ईआजी अँधेरे में दियासलाई टटोलकर ढिबरी जला देती हैं। आंगन और ओसारा सब कुछ वैसा ही है। तुलसी का बिरवा काफी फैल गया है

ग्रौर एक, दो बकरियां कम नजर आ रही हैं।

"और बकरी कहां गई, माई ?" सुबल पूछता है।"

"बाबू रे ! खर्चा-बर्चा की कमी हुई तो बेंच दिया है।"

लव देर से दादी को पहचानने की कोशिश कर रहा है।

"भइया की कोई चिठ्ठी-पत्री ग्राई ?"

"कभी-कभार कनेआ की ही आती थी। बाबू की तो कोई खबर नहीं।"

"गोदावरी कहां है ?" रेवती बात पलटती है।

"हल्ला-हंगामा सुनकर उसके ससुराल वाले ले गए हैं। उसकी महतारी बोल रही थी कि फिर आनेवाली है। गोदा की दूसरी देह है, इसी महीने होगा।"

रेवती अचरज करती है, "गोदा कितने दिन की है। मेरे सामने तो बच्ची थी।"

'समय जाते क्या देर लगती है, कनेआ। सब कुछ कितनी तेजी से बदल रहा है। रतनपुर वालों ने पूरे टोले को काम देना बंद कर दिया है। अब जब तुम्हारे टोले के लोग झुकने का नाम नहीं ले रहे तो इन्हें तरह-तरह के झूठे मुकदमे, चोरी, राहजनी, सेंधमारी और डकैती की घटनाएँ गढ़कर फँसा रहे हैं। कभी-कभी तो मन घबड़ा जाता है कि क्या करें !"

"चिन्ता न कर, माई !" सुबल समझाता है, "मैं गाँव छोड़कर नहीं जाऊँगा।"

"मगर कनेआ कैसे रहेगी, बबुआ ?"

"तुम्हारी पतोहू बनकर, और कैसे ?"

"सो तो है।···मगर थाने को पता चल गया कि सुदेव बहू उनकी है तब···। रतनपुर के बाबू लोग भी तो हैं। लेकिन जब टोले की किसी बात की उन्हें अब जानकारी नहीं होती तो कनेआ के बारे में भी नहीं होगी। मेरी कनेआ चौखट से बाहर पांव नहीं रखेगी। मुझे तो खाली तुम्हारी चिन्ता है।"

"मेरी चिन्ता काहे की ? तुम्हारी नई पतोहू भी बाहर-भीतर रहेगी। डरने की क्या बात है ? यह तो इससे भी लोहे की मन वाली है।"

माई को बेटे की बातों से कुछ-कुछ धीरज मिलता है। वह पोते को गोद में लेकर सो रही है।

९

समय गुजरते क्या देर लगती है। नैहर में रेवती माई-बाप से कह कर आई थी कि दो-चार दिनों में ईआजी से भेंट-मुलाकात के बाद लौट आएगी। मगर इस बार उसे ससुराल आए महीने से भी ज्यादा हो रहे हैं। रेवती को फिर बेटा हुआ है। जिस दिन से लड़का धरती पर आया है, रेवती उसे कुश कहती है। ईआजी के पाँव तब कुश को पाकर धरती पर नहीं है। सुबल एक महीने से गायब है। रेवती रोज-रोज उसकी बाट देख रही है। उसका मन दिन-प्रतिदिन घबड़ाता जा रहा है। सुबल जिस दिन लौटने का वायदाकर जाता है, उस दिन जरूर लौटकर आ जाता है। कहीं वह पकड़ तो नहीं लिया गया है। इआजी को भी यही आशंका है। परन्तु रेवती उन्हें ढाँढस देती रहती है। हालाँकि, उसी का संशय ज्यादा पुष्ट होता जा रहा है। नैहर से बाबू की चिट्ठी का भी इंतजार कर रही है।

कुछ दिनों तक तो यहाँ उसका मन बहुत घबड़ाया था। चौदह कोसी पंचायत वह भूली नहीं है। रेवती अभी आँगन में खटोली पर कुश को सुला ही रही थी ईआजी दुआर की ओर से आकर चबूतरे पर बैठती हैं। "गजब हो गया, कनेआ! जानवर को भी माया-मोह होता है। इनमें तो जैसे दिल ही डालना भगवान जी भूल गए हैं। एकदम पापी हैं—सब भारी पापी!"

"क्या हुआ, ईआजी?" रेवती भी बैठ जाती है।

"हम लोगों की जान खस्सी भेंड़ से भी सस्ती है।"

"क्या हुआ, ईआजी?"

"कारू भगत के बेटे को मुदई लोगों ने मार डाला?"

"क्या कहती हो, ईआजी! इस तरह दिन-दहाड़े?"

ईआ जी का क्रोध बढ़ता है, "कारू भगत का लड़का कमनिस पाटी में था।"

"तब इससे क्या हो गया?"

"रतनपुर वाले मालिकों के जुलुम सुनेगी?" ईआ जी इसे खींचकर घर के अन्दर ले जाती है। "कारू भगत के लड़के को बहलाकर दुआर पर ले गए और एक घर में बन्द कर अंग-अंग काट दिया। अब कहते हैं कि पूरे इस टोले को आग की तरह फूंककर ताप जाएंगे।"

"कब?" रेवती के मुंह से अनायास ही निकलता है।

"कब क्या—उन्होंने कोई दिन दिया है? हमको, तुमको, सबको सजग रहना है और क्या?"

बातचीत करते समय ही अचानक रेवती के पेट में कुछ दौड़ना शुरू करता है, जैसे टोले में हलचल की कथा उसे पहले से मालूम हो और वह बाहर निकलकर लड़ने के लिए छटपटा रहा हो। रेवती हल्की 'दरद' महसूस करती हुई जमीन पर लेट जाती है।

"पिलवा मुसहर के पास जाती हूँ। तू उठकर खटोले पर जा।" ईआजी खड़ी हो जाती है।

"आप भी गजब है, ईआजी।" रेवती दरद से कराहती हुई भी हँसती है। "अरे, समय पूरा हो रहा होगा। दरद तो उठता ही।"

"तुम्हीं तो कह रही थी कि अभी बीस-पच्चीस दिन की देरी है।"

रेवती फिर हँसती है। "कह तो रही थी, लेकिन स्लेट पर दिन थोड़े लिखकर रखा हुआ है कि सुकुल बाबा के पतरे की तरह दिन ठीक-ठीक ही निकल जाय। जोड़-घटाव गलती भी तो हो सकती है।"

रेवती का दरद बढ़ता आ रहा है। वह दौड़कर गोदावरी की माई को बुलाती है। रेवती बड़े जोर से छटपटा रही है। गोदा की माई मुस्कुराती है, कनेआ की देह चाहे अभी छूटे, चाहे रात में—लेकिन चौबीस घंटे से ज्यादा देर नहीं है। ईआजी सोहर गुनगुनाने लगती है।

"कातिक मासे बरस छठ कइली, अगहन मासे एतवार।

इहे बरत हम कइली हो सासु,

बबुलवा हमार नीमन, होरिलवा हमार सुनर हो···"

रेवती का दरद जैसे-जैसे बढ़ता है, ईआ जी की खुशी बढ़ती जाती है।

आधी रात के लगभग रेवती के घर थाली बजने की आवाज टोला-पड़ोस में फैलती है। लोगों को बूझने में देर नहीं लगती कि सुदेऊवा बहू को लड़का हुआ है। ईआजी को ताज्जुब होता है, कनेआ को कैसे मालूम कि इस बार भी लड़का ही होगा। जब बाबू पेट में था तभी कनेआ और सुबलवा ने मिलकर इसका नाम रख दिया था। ढिबरी के उजाले में ईआजी देखती हैं, यह बाबू तो एकदम सुबलवा पर ही गया है—नाक-नकस एकदम मिलता-जुलता। क्या नाम रखा है इसका ? वे मन-ही-मन याद पारती हैं—शायद, कुशल ? सीता महतारी को लव-कुश मिल गए हैं। इससे ज्यादा चाहिए भी क्या ? विदेसिया बाबू को तो कैसे कोई चिन्ता-फिकिर ही नहीं है। परदेस में ही धूनी रमा लिया है—साधु हो गया है सुबलवा का क्या भरोसा ! आज है, कल नहीं हैं। उसको भी नहीं मालूम है। जहाँ इतने भारी-भारी शैतान लोग हैं वहाँ ईआजी ने भी बेटा के लिए कलेजे पर पत्थर बाँध लिया है। इस बेटे पर जवार-पथार के लोगों का अधिकार है। ईआजी ने भी धरती मैया के आँचल में खुशी-खुशी एक बेटा सौंप दिया है। सीता मैया के तो दोनों सवाँग हाथ से निकल गए हैं। यही लव-कुश तो घर-दरवाजे के रक्षक बनेंगे।

एक दिन चबूतरे पर अपनी दोनों टाँगों पर कुश को सुलाकर ईआ जी तेल मालिश करती हुई पूछती हैं, "अपने दोनों लव-कुश बाबू को कोई भारी पंडित या सुकुल बाबा को ही बुलाकर जन्म-कुंडली बनवा लिया जाता।"

"अपनी जात के लोग अपने बच्चों की जन्म-कुंडली भी बनवाते हैं क्या ? मैंने तो पहले कभी नहीं सुना।" रेवती को अचरज होता है।

"यह बात तो है, कनेआ !" ईआजी मुँह लटका लेती हैं, हमारे यहाँ जन्म-कुंडली बनाने के लिए कोई तैयार ही नहीं होगा। परन्तु एक बात तो है, कनेआ। हमारे लिए पिलवा मुसहर ही तो पंडित का बाप है। एक से बढ़कर एक भविष्य बताता है। क्या मजाल जो उसकी कोई बात फेल हो जाय।"

रेवती ईआजी के भोलापन पर खिलखिलाकर हँसती है ? वह समझाती है, "जन्मकुंडली की चिन्ता उनको होती है ईआजी, जिन्हें दूसरों का खून चूसकर खुद की जिन्दगी बचाने की हविश है। हमारे बाबुओं की कोई कुंडली ही नहीं होती है। हमारे बेटों का हाथ देख लें तो बड़े-बड़े पंडितों का माथा भी चकरा जाय। अपने पोते का हाथ अपने हाथ में लेकर क्यों नहीं देखती हैं कि उसके हाथ में अजूबा क्या है !"

ईआजी बच्चे का हाथ उलट-पलट कर देखती हैं। "मुझे तो इसके हाथ की रेखाएँ ही समझ में नहीं आती हैं। बाप रे ! भला किसी के हाथ में इतनी रेखाएँ होती हैं !"

ईआजी चौंकती हैं।

ये सब रेखाएँ नहीं हैं, भाले-गड़ासे हैं, ईआजी !"

"इसका मतलब ?"

"आपका पोता शैतानों का जुलुम कभी बर्दाश्त नहीं करेगा।"

"सच !" ईआजी आह्लाद में बोलती हैं, भगवान करे, तुम्हें ऐसे दकीस बेटे हों !"

"धत् !" रेवती लजाकर वहाँ से उठ जाती है।

समय गुजरता जा रहा है। रेवती की नैहर की तरह यहाँ का इलाका भी तनावपूर्ण होता जा रहा है। मजूरों, बनिहारों और कमजोरों को कभी भी आदमी नहीं समझने वाली शोषकों की मुट्ठी भर जमात भी भयभीत रहने लगी है ?

एक छोटी-सी बात ने रतनपुर के इलाके में नई लड़ाई की शुरुआत कर दी है। रतनपुर शहर से दक्षिण बाईस मील की दूरी पर बसा है। वहाँ लोग बस से जाते हैं और बस जहाँ तक पहुँच पाती है वहाँ से तीन मील पैदल या बैलगाड़ी से लोग रतनपुर पहुँचते हैं।

रतनपुर में कुल एक सौ चालीस परिवार हैं, जिसमें पच्चीस परिवार राजपूतों के हैं। बाकी सब परिवार रजवाड़, तेली, धोबी और दुसाध जातियों के हैं। ये जातियाँ पिछड़ी और अनुसूचित जातियाँ हैं।

जमीन का ज्यादा हिस्सा उन पच्चीस परिवारों के पास लगभग पच्चीस बीघे से लेकर साठ बीघे तक है। इनमें शिवजी मालिक को

एक सौ पचास बीघे जमीन है। इनसे बची हुई जमीनें सिर्फ पाँच परिवारों के पास डेढ़ से तीन बीघे तक हैं। बाकी सभी भूमिहीन हैं। इनकी झोंपड़ियाँ जिस जमीन पर हैं, उस जमीन का कानूनी परचा इनके पास है। खेत मजूरों में जो कमिया हैं उसे इस इलाके में हरवाह कहा जाता है।

रतनपुर का टोला, जहाँ रेवती रहती है, छूँछ हरिजनों—चमार और दुसाधों का टोला है जो रतनपुर के कमिया मजूर हैं जिन्हें रतनपुर के मालिकों की इजाजत के बाद ही दूसरे गाँवों में हरवाही करने का हक है। इस टोले में सुबल का बाप रतनपुर के शिवजी मालिक का बन्धुआ या यों कहिए कि कमिया मजूर था। उसका बड़ा बेटा सुदेव परदेश भाग गया है और छोटा सुबल मालिकों से 'विद्रोह' कर गया है। मालिक के भीतर-भीतर यह आग कब से सुलगा रही है।

गाँव की जमीन बहुत उपजाऊ है। यहाँ साल में तीन फसलें होती हैं। शिवजी मालिक के अलावे भी यहाँ तीन के पास टैक्टर और पम्पिंग सेट फिर भी, नहर से सिंचाई के लिए पूरी सुविधा है। डेहरी-ऑन-सोन से आने वाली नहर गाँव के बिल्कुल पास के घरों से सिर्फ पचास गज की दूरी से गुजरती है।

पिछले साल से ही यहाँ मालिक और मजूरों का सम्बन्ध बिगड़ता आ रहा है। मालिकों ने अचानक मजूरी की शर्तों में तब्दीली कर दी है। हरवाहों को बाईस कट्ठा जमीन अनाज के लिए दो कट्ठा जमीन गन्ने के लिए मालिकों से मिलती रही है। पिछले साल मालिकों ने अचानक बाईस कट्ठा से जमीन घटाकर चौदह कट्ठा कर दी और गन्ने के लिए जमीन देनी बन्द कर दी। उन्होंने हरवाह को दिया जाने वाला धान भी बीस मन से घटाकर दस मन कर दिया है।

मजूरों ने भी जिद ठान ली है कि वे यहाँ के मालिकों को छोड़कर दूसरे गाँवों में जाकर हरवाही और बनिहारी करेंगे। मालिक लाठी और भाले के साथ गाँव के सीवान पर खड़े हो गए—ससुर लोग गाँव छोड़कर दूसरी जगह जाएँगे तो हमारा काम कौन करेगा? मगर पता नहीं, इनमें भी हिम्मत कहाँ से आ गयी है। वे ये मालिकों की बदली हुई शर्त पर काम करने के लिए तैयार नहीं हैं। मालिकों ने दूसरे गाँवों से मजूर मँगवाने शुरू

कर दिए हैं। सबसे बड़ी बात तो यह है कि मालिकों ने अपनी जिद के लिए एक बहुत बड़ी परम्परा तोड़ दी है—उन्होंने हल की मूठ स्वयं पकड़ ली है। हमारे यहाँ ब्राह्मण, राजपूत, भूमिहार हल तक नहीं छूते। इसलिए उनके बीच के दो-तीन बीघे जोत वाले भी बेचारे परम्परा के चलते हरवाह रखने के लिए मजबूर हो जाते हैं। फिर भी कहीं-कहीं ये लोग परस्पर को ठेंगा दिखलाते हुए भी हल की मूठ को पकड़ लेते हैं और बैल के परिहृद में जनेउ लटकाकर खेत जोत लेते हैं। मालिकों की कतार से इन्हें कोई अलग भी कर दे तो कोई बात नहीं। मगर ये ऐसी झूठी परम्परा को सीना तानकर इनकार करने लगे हैं।

दस-पन्द्रह दिन पहले की घटना है। पड़ोस में जिला के बोदरा गाँव से छोटे-छोटे कुछ व्यापारी रतनपुर आए थे। उन्होंने यहाँ के किसानों से दस गाड़ियों में चावल खरीद लिया और दाम चुकता करने के बाद जैसे ही सीवान से बाहर हुए कि रतनपुर के मालिकों ने ही दोहरी चाल चली। मालिकों ने अपने गुंडों को ललकार कर व्यापारियों का अपना ही बेचा हुआ चावल लुटवा लिया और स्वयं पुलिस थाने में जाकर प्राथमिकी दर्ज करा दी कि कुछ लुटेरों ने बोदरा गाँव के व्यापारियों का दस गाड़ी चावल लूट लिया है।

इसी घटना के चलते चौवालिस हथियारबंद पुलिस रतनपुर और उसके टोले में छः बजे सुबह पहुँच गयी है। तमाम मजूर अपने-अपने घरों में दुबके हुए हैं। परन्तु पुलिस इनकी झोंपड़-पट्टियाँ उजाड़ रही है और मालिकों की सहायता से मजूरों को बाहर खींच-खींचकर बेरहमी से पीट रही है। गनेसी दुसाध को मालिकों ने गोली मार दी है और उसकी देह को घसीटते हुए नहर तक ले गए हैं। इससे भी मन नहीं भरा है तो रामानन्द बाबू और रामेश्वर बाबू उसकी छाती पर बैठ गए हैं और छूरा से उसके पेट से लेकर गुप्तांगों तक चीरकर अट्टहास कर रहे हैं। फेकन दुसाध, बालगोविन दुसाध और रामनाथ तेली जिसे शादी के बाद अपनी मेहरारू लाए आठ दिन ही हुए है, तीनों को घसीटकर पुलिस गाड़ी तक ले गए हैं। गोदावरी के पेट में ही बच्चा मर गया है। रेवती के बाल पकड़कर मालिक लोग पुलिस गाड़ी तक घसीटते हुए ले गए हैं। उसकी गोद में सात-आठ

दिन का मासूम बच्चा है और लव माँ के पास अधमरा चीख रहा है।

पुलिस बार-बार रेवती से सुबल का पता पूछ रही है। सुबल उसका देवर ही नहीं, अब तो मरद भी है। रेवती पर पिछले भी कई इल्जाम हैं। सुबल पर मालिकों ने व्यापारियों का चावल लुटवाने का इल्जाम मढ़ दिया है। ईआजी के चीखने-चिल्लाने से क्या होता है! पुलिस गाँव के कई निर्दोष और अनाड़ी युवकों के साथ रेवती को भी 'लाल दरवाजा' ले गयी है।

टोले में लगातार कई दिनों से सन्नाटा है। सुबह-शाम छप्परों का सुलगना कई दिनों से बंद है। बचे हुए लोगों में अधिकांश टोले से भागे हुए हैं। मगर ईआजी भी गजब 'कठजीव' है—घर के अन्दर ही पड़ी हैं। गोदावरी का बाप भी सबको छोड़-छाड़कर भाग गया है। सम्पूर्ण टोला श्मशान से भी ज्यादा भयावह और सुनसान लग रहा है।

ईआजी के हाथों में कोई एक पोस्टकार्ड दे गया है।

यह किसका पोस्टकार्ड हो सकता है! कनेआ तो जेल में हैं। बाबू बिदेसिया हैं—परदेस में ही भुला गये हैं। उनको क्या पता है कि गाँव-घर में भूकंप हुआ है। पहले की सारी दुनिया बदली हुई है। अब तो महतारी होकर भी ईआजी ने बेटे की ओर से कलेजे पर पत्थर बाँध लिया है।

सुदेव अब क्या आयेगा!

वह अब कभी नहीं आएगा। अब तो हमें भी इस धरती से धो-पोंछकर मिटाने का संकल्प मालिकों ने कर लिया है। इस हालत में बाबू परदेस में ही रह जाय तो अच्छा है। 'अपना देश' ही कहाँ रह गया है। जमीन-जायदाद, नहर, पुलिस, न्याय—सब पर तो उन्हीं का कब्जा है। कनेआ भी बाबू के हाथ से निकल गयी है। पता नहीं, वह जेल में ही रुड़ जाएगी या कभी बाहर आने का भी भाग्य होगा! कनेआ को बाहर लाने वाला कहाँ कोई रह गया है। सर्वत्र अन्धेरा है—कुप्पाकुप अँधेरा!

पोस्टकार्ड पढ़ने वाला कोई नहीं है। ईआजी मोड़-चमोड़ कर पोस्टकार्ड को अँचरा में बाँध लेती हैं।

सुबल भी बेटा है तो क्या—ईआजी के लिए तो वह भी मुर्दा है। ऐसी आफत में मेहरारू महतारी और दो-दो लड़कों को छोड़कर कहाँ मर रहा

है? दुनिया के लिए 'सुराजी' बनता होगा। यहाँ तो तमाम अपने लोग 'जेहली' हो गए हैं। आज से जिन्दगी भर के लिए 'जेहल' काटने के दिन शुरू हो गए हैं।

ईश्राजी को पोस्टकार्ड के अक्षरों में अब कोई उत्सुकता नहीं रह गयी है—सुदेव, सुबल और कनेश्रा तीनों का ठौर वे जानती हैं। चौथा उन्हें कोई भी पोस्टकार्ड लिखने वाला नहीं है। ईआजी गाँव छोड़कर जा रही हैं—पता नहीं, कहाँ! कोई सीवान पर लाठी के सहारे खड़ा-खड़ा गा रहा है,

'तनी खाड़ा होके सोच ऽ एक छन भइया,
काहे चलत बाटे गोली दनदन भइया,
केहू के भतुना या अन्न, भरल बाटे लाल मन
केहूँ के मरलो प जुरे ना कफन भइया…'

९०

जेहल की दुनिया—रेवती के लिए एकदम नई दुनिया है। तरह-तरह के वार्डर, तरह-तरह की मेहरारू। रेवती कम्बल बिछाकर लव-कुश के साथ रात-दिन पड़ी रहती है। लव के माथे पर चोट आ गयी थी। धीरे-धीरे घाव सूख रहा है। वार्ड लम्बा-चौड़ा है। मगर दस से ज्यादा औरतें उसमें नहीं है। तरह-तरह का पहनावा, तरह-तरह की बातें। एक पूरब देश की जनाना थी जहाँ 'वो' बिसारकर चले गए हैं। दाँतों में मिस्सी लगाती है, सिपाहियों से लुक-छिपकर पान मंगाकर खाती है और उन्हीं के सामने बीड़ी माँगकर पी भी लेती है। बाप रे! वार्डरों के साथ तो उसका मुह ही नहीं सटता। रेवती को अब पता चला है कि वह पाकिटमार जनाना है, रेल मे यात्रियों की जेब काटती है। रेवती ने औरतों के बारे में ऐसा कभी नहीं सुना है। वह जनाना अजीब तरह की कुर्ती पहनती है। छाती से एक इन्च ऊपर, बाकी पेट बिल्कुल नंगा रहता है। तिरछी माँग काढ़ती है और पतली लकीर की तरह सिन्दूर भी लगाती है। तब क्या इसे अपना मरद

भी है ? तब काहे लुच्चे सिपाहियों के साथ इस तरह हटर-हटर बतियाती रहती है ? वार्डरों की एक भी बात खाली नहीं जाने देती, मुंह तोड़ जवाब देती है। नाक में पान-फूल छूंछी, कानों में सोने की गोल-गोल बालियाँ, जैसे ईआजी की किस्सावाली इन्दर की रानी हो।

वह साड़ी भी गजब तरह से पहनती है। कमर के चारों ओर ऐसे लपेटती है जैसे केले के पत्तों के भीतर की नई कोपलें हों। खाली दो ही चोटियाँ लटकाती है और ललाट पर मैनी गाय की सींग की तरह चार-पाँच बालों की घुंघराली लटें बाहर कर देती हैं, जैसे हवाएं स्वयं खींच लायी हों। कभी-कभार वार्डर उसकी छातियों पर ऐसे अँटकता है कि वह समझ जाती है और हँस-हँसकर गालियाँ बकती हुई मुंह फेर लेती है।

रेवती उदास कोने में पड़ी रहती है और बराबर रोती है। वार्ड की औरतें तरस खाती रहती हैं। उसके बच्चे को गोद से लेकर प्यार करने लगती हैं। बेचारी कुछ बोलती नहीं है। जनाना वार्डेन भी जब तक उससे बहुत कुछ पूछने की कोशिश करती है। मगर मरद सिपाहियों की तरह वह भी मजाक शुरू कर देती है। 'साली के दो-दो मरद हैं तब भी क्या, इसके शरीर का बाल भी बांका नहीं हुआ है। दोनों जरूर पुस्ट सांड़ होंगे तभी इतने वजनदार दो-दो बच्चे व्याई है ?···खूंखार डकैत है। मरद के साथ मिलकर चावल लुटवायी है। उस पूर्वी पाकिटमारिन से यह कम है क्या ? ···खाली इसका चेहरा मासूम है, भीतर से तो काठ है—काठ !"

रेवती जैसे कुछ सुनती नहीं है, बिफरती रहती है।

वह तिरछी माँगवाली जनाना उससे पूछती हैं, "कहाँ से आयी हो ?"

रेवती लजाती है।

"अरे, बोल भई ? कहाँ घर है तुम्हारा ?"

"रतनपुर का एक टोला है।" रेवती सिसकती हुई बोलती है।

"इसी जिले में है ?"

"हूं।"

पहली बार रेवती की उससे इतनी ही बातें हुई हैं। धीरे-धीरे वह उसका नाम भी जान गयी है। जमादार जब-तब उसका नाम लेकर पुकारता है—अंजु ! आज तक नैहर या ससुराल उसने अंजु नाम कभी नहीं

सुना है। अंजु के साथ उसकी झिझक खत्म हो गयी है। अंजु उससे दूसरी बार फिर सवाल करती है. "डकैती में रहती हो ?"

रेवती अचानक आँखें तरेर लेती है, "क्या बकती हो, अंजु दी ? हमारे खानदान ऐसा कोई नहीं है। हमारे सवांग लोग तो मजूरी के सवाल पर लड़ते हैं। रतनपुर वालों को नाहक सताया गया है ?"

"तब चावल किसने लूटा है।"

"रतनपुर के किसानों ने ?"

"वे भी तुम्हारे साथ जेल आए हैं ?"

"सभी बेकसूर पकड़कर लाए गए हैं।" रेवती क्रोध में बोलती है, "वे जेल में आने लगें तब तो जमाना ही बदल जाय। मगर उन्हीं के लोग तो पुलिस में हैं। वे जेल कैसे आ सकते हैं ?"

रात मे कैदी नम्बर दे रहे हैं। रेवती को नींद नहीं आ रही है। वह अंजु के ऊपर से धीरे से कम्बल खींचती हुई पूछती है, "अंजु दी, एक बात बताना तो ?"

"क्या है, रे ?" वह हड़बड़ाकर उठती है।

"ये लोग कौन हैं ?"

"कौन लोग रे ?" अंजु झुंझलाकर फिर लेट जाती है।

"वही जो एक साथ गा रहे हैं।"

"ऐसे लोग तो रोज दस-बीस आते रहते हैं।"

"कौन लोग हैं ?"

"सत्याग्रही हैं।"

"सत्याग्रही माने ?"

"तुम्हारी ही तरह के लोग हैं।" अंजु कम्बल तानकर अपना मुँह ढँक लेती है। "सो जा चुपचाप।"

"तब क्या ये लोग सुराजी हैं !" रेवती होठों में फुसफुसाती है। उसे सुबल याद आने लगता है। गीत की ओर उसका ध्यान केन्द्रित होता जा रहा है। गीत के साफ-साफ शब्द उसे सुनायी पड़ने लगे हैं—

तनिक ठाड़ा होके सोच ऽ एक छन भइया
काहे चलत बाटे गोली दनदन भइया

केहु के अतुना वा अन्न भरल वाटे लाख मन
केहु के दुलम वाटे खरची हरदम भइया
तनिक ठाड़ा होकेऽ सोच ऽ एकछन भइया।
केहु के रंग-रंग के ड्रेस भरल वाटे सूटकेस
केहु के मरलो प जुरे न कफन भइया
तनिक ठाड़ा होके सोच ऽ एकछन भइया।

सुबह नम्बर खुलते ही पुरुष वार्ड में जोरों का हंगामा सुनायी पड़ता है। "जेल के अंदर कैसा हंगामा है, अंजु दी?"

"सिपाही कैदियों को डंडा लगा रहे हैं।"

"क्या मतलब?"

"नम्बर से निकलना नहीं चाहते होंगे।"

"पुलिस यहाँ भी बेरहम है न?"

"यह तो हर जगह वही है।"

अचानक पहली रात की तरह ही फिर बगल वाले वार्ड से ही कोई तान छेड़ता है,

उठ जाग मुसाफिर भोर भई
अब रैन कहाँ जो सोवत है!
जो सोवत हैं सो खोवत है,
जो जागत है सो पावत है!

"इसका क्या मतलब है दीदी?" रेवती गीत का मतलब न समझती हुई पूछती है।

"यह भी कुछ कैदी मिलकर गाते हैं।"

"किसलिए?"

"सुनती हूँ इसे गाने वालों की सजा कम कर दी जाती है।"

"तब हम लोग भी मिलकर इसी भजन को क्यों नहीं गाते हैं कि हमारी भी सजा जल्दी खतम हो जाएगी।"

अंजु इसकी अबोधता पर हँसती है, "मुझे तो खुद नहीं मालूम कि मेरी सजा कितने दिनों की है। तुम्हें मालूम है क्या?"

रेवती सिर हिलाकर अपनी अज्ञानता प्रकट करती है।

"यहाँ बहुत ऐसे कैदी हैं जिन्हें अपनी सजा की मियाद बिल्कुल मालूम नहीं है।"

दूसरे दिन नम्बर बंद करते समय रेवती जमादार से पूछती है, "रात में वह गीत गाने वाले कौन हैं? वे क्या गाते रहते हैं?"

जमादार उसका कुछ जवाब नहीं देता है, कुटिलता से मुस्कुराकर पास खड़े सिपाही से पूछता है, "गनपत सिंह?"

"जी, हजूर।"

"इस जनाना को जानते हो?"

"देखता हूँ हजूर।"

"कैसी है?"

"बहुत अच्छी है।"

"मेरा मतलब नहीं समझे, गनपतसिंह?"

"समझ गया, जमादार साहब।"

"क्या समझ गए?"

"दो लड़कों के बाद भी बहुत काम के लायक है।" कहते हुए सिपाही ठठाकर हँसता है।

रेवती गोद के बच्चे को जमीन पर धम्म से पटकती है और लपककर दरवाजे की सलाखें पकड़कर चिल्लाती है, "इधर आ जमादार के बच्चे? तुम्हारे मुँह के भीतर से तुम्हारी जबान खींच लूँ? आदमी के लायक नहीं रह गया है।"

जमादार भी बेहया की तरह हँस देता है और चाभियों के गुच्छे नचाता हुआ आगे बढ़ जाता है। सिपाही भी दुम की तरह उसके पीछे-पीछे हिलता जा रहा है।

"ये लोग इसी तरह हमेशा अनाप-शनाप बकते रहते हैं।" एक औरत कहती है।

"और तुम लोग बर्दाश्त कर लेती हो?"

"तब हम लोग क्या करें?"

"तुम लोग मेरा साथ दो। हम लोग उसे पकड़कर खूब मार मारें?"

कुछ तो रेवती का मुँह ताकती रह जाती हैं। मगर कुछ रेवती को

नादान समझकर हंस देती हैं।

"सुनती हूँ एक जमाना आजादी मिलने के पहले सुराजियों का भी था। उनकी वार्डरों के साथ खूब ठनती थी।" अंजु उन्हें अनुभवी की तरह बताती है, "वे सिपाहियों की टाँग पकड़कर खींच लेते। मगर अब वह जमाना कहाँ रहा?"

"क्या बात करती हो अंजु दी," रेवती कहती है, "अभी क्या हम सुराजियों से कम हैं? आँखें निकाल लूँगी। उन्हीं जालिमों के कारण तो यहाँ सजा भुगत रही हूँ। मुझे डामिल—फाँसी का कोई भय नहीं है।"

जनाना वार्डन खड़ी-खड़ी उनकी बातें सुन रही है। बाप रे! यह जनाना तो नम्बरी खूनी है दादा! इसके बारे में जेलर साहब को रपट करनी चाहिए। रेवती नामक इस जनाना को अकेली कोठरी में बन्द रखा जाय!···

जमादार और जनाना वार्डन की रोज-रोज की शिकायतों से जेलर के भी कान खड़े हो गए हैं। जेलर सोचता है, इस खूंखार औरत के बारे में यह भी पता लगाना जरूरी है कि इसका पिछला इतिहास कैसा है? रेवती के बारे में जेलर इतनी ही सूचनाएँ इकट्ठा कर सका है कि इस औरत का चाल-चलन ठीक नहीं है। कपड़े की तरह मरद बदलती रहती है। इसका पहला मरद परदेस गया है जो आजतक नहीं लौटा। दूसरा व्याह होते ही छोड़-छाड़कर लापता है और डकैतों के गिरोह में शामिल हो गया है। इस बीच पता नहीं कितने मरद बदल चुकी होगी।

जेल-अधीक्षक जेलर की बातों से सहमत है और रेवती अलग कोठरी में डाल दी गयी है। अब वार्डरों अथवा अन्य अधिकारियों को रेवती से मजाक करने का बड़ा ही एकान्त स्थल मिल गया है। जमादार तो गनपत सिंह को लेकर बिना ड्यूटी के भी उधर पहुंच जाता है और रेवती से ही रातभर कोठरी के अन्दर ही गुजारने की इजाजत माँगता है। रेवती घबड़ा गयी है। दोनों लड़के एक साथ चीखने लगते हैं तब रेवती पागलों की तरह हाथ-पाँव दरवाजे की सलाखों पर पीटती है और फूट-फूटकर रोने लगती है।···सुबल भी जाने कहाँ मर गया है?

रेवती दिन-प्रतिदिन सूखती जा रही है। नई जमादारिन एक महिल

के साथ खाना देने के समय प्रायः रोज आ जाती है। जमादारिन रेवती को वैसी खूंखार नहीं लगती है। बहुत सोच-विचारकर एक दिन रेवती पूछती है, "दीदी, आप हमारी मंजू दी को जानती हैं न, वह सात नम्बर में है।"

"जानती तो हूँ। मगर क्या बात है?" जमादारिन की बड़ी-बड़ी आंखें उसके सम्पूर्ण चेहरे पर फैल जाती है। रेवती उसके चेहरे पर अटकते ही सहमती है। मगर फिर साहस बटोरकर कहने लगती है, "मुझे मंजू दी से बात करा दो, दीदी!"

"यह कैसे हो सकता है?" जमादारिन बनावटी डाँट के लिए फिर अपना चेहरा बिगाड़ लेती है। "तुम मुझे जेलर समझती हो क्या? मेरा मतलब है मैं उसकी तरह कैदियों के साथ निर्दयी नहीं हूँ। परन्तु मुझे भी कोई पावर है? कुछ नही है? वहीं में इजाजत मिल जाए तो सब कुछ करा सकती हूँ।"

"तुम्हारी पाँव पड़ती हूँ, दीदी···!" रेवती फफक-फफककर रोने लगती है।

जमादारिन झुंझलाती है, "तुम समझती क्यों नहीं कि मैं तुम पर दया भी नहीं दिखला सकती। जेल का ऐसा ही मैनुअल है—कायदा है। मंजु को यहाँ लाना या तुम्हें ही साथ मे ले जाना इतनी आसान बात है? बाबा रे! मेरी नौकरी तो जाएगी ही। मुझे भी जेलर पकड़कर तुम्हारी ही बगल में ठूँस देगा समझी?"

"मुझे तुम्हारे साथ बहुत अच्छा लगेगा, दीदी! ···बहुत अच्छा लगेगा! मेरे इन बच्चों पर तरस खाओगी नहीं? ···मेरे दो-दो मरद हैं, दीदी···दोनों-के-दोनों मर गए है। घर पर ईजा जी हैं, ठीक तुम्हारी जैसी। उफ! पता नहीं, कहाँ होंगी? ···" वह जोर से रोने लगती है।

जमादारिन घबड़ा जाती है और डरने लगती है। वह फिर बनावटी डाँट से बोलती है, "जोर-जोर से चीखेगी तू? कहीं जेलर चला आया ता उल्टा मुझे ही धाँस करने लगेगा। उसके धाँस करने का मतलब है तीनो लोक से जाना। ना बाबा ना, मुझे अपने बाल-बच्चों को भूखा नहीं मारना है। सबको अपना पेट प्यारा होता है···सबको···!" जमादारिन बुदबुदाती हुई चली जाती है।

रेवती फिर जमीन पर लेट जाती है और लड़कों के साथ रोने लगती है। इस 'काल कोठरी' में तो दिन काटे नहीं कट रहा है। इन दीवारों को तोड़कर कैसे निकल भागे रेवती ? हरामी 'मरदों' ने तो सारी ताकत ही छीन ली है। कायर की तरह मुंह छिपाए बैठे हैं। सुबल को पता चल नहीं गया होगा कि उसकी बेकसूर मेहरारू जेल में है ?

हवा का तवा हुआ झोंका 'भुरकी' से उतर-उतरकर आता है रेवती की छाती पर सवार होकर लगातार मुक्का मारता चला जाता है। त्रिदेसिया तो विदेसिया···यह नया सवाँग सुबल भी अपनी सारी खुशी और बल छीनकर चला गया है। ठंडी बयार तो मन को और भी कमजोर बना देती है। अंजू दी के साथ का 'सुराज' पापी जेलर ने छीन लिया है। रेवती अपना सर्वस्व हारकर इस 'कालकोठरी' में छटपटा रही है। ऐसी स्थिति में हठात मोती पता नहीं कहाँ से ध्यान में आकर धँस गया है ! बहुत कोशिश कर रही है रेवती, उसके क्रोधाग्नि में मोती का ध्यान जल जाए। मगर मोती का ध्यान तो मेले की तरह फैलता जा रहा है···। ध्यान इतने मधुर होते हैं, इतने मीठे···कि चरवाही में मोती के विरहे याद आने लगते हैं,

"रसे-रसे वंसिया बजाऊ रे सँवरिया,
छूटल संघतिया बा मोर
लोढ़ी-लोढ़ी कुसुमी के कँटिया डगरिया से
छतिया के देत बा खखोर"

सच रे पापी जेलर ! ईआ जी अकेली होंगी !

सारी बकरियाँ मार-मारकर अब तक 'मुदई लोग' हजम कर गए होंगे। अपना टोला तो उसी तरह उजाड़ होगा—एकदम पतझड़ और विरान। खाली सिपाहियों की बूट से पत्ते खड़खड़ाकर चूर-चूर होते होंगे और चारों तरफ भय की असंख्य परतें घहराने लगती होंगी। ईआ जी उस वीराने में खर्ची कहाँ से लाती होंगी, जीती कैसे होंगी !

···ईआ जी से सुनी हुई फूलवसिया की कहानी रेवती को अक्षर-अक्षर याद है।···फूलवसिया जब राजा के छोटका बेटा के साथ आयी तो इन्दर महाराज को नचा के छोड़ दिया था। दूसरे की बेटी-बहिन पर शैतानी नीयत रखनेवाला इन्दर फूलवसिया के सामने थर्र मारने लगा है।

कहने के लिए भले ईआ जी की कहानी पिछले युग की हो, मगर रेवती तो आज भी फूलबसिया से कम नहीं है। मुदई लोगों को मजा चखाने की हिम्मत रखती है। जेल से छूटते ही मालिकों से गिन-गिनकर बदला लेगी। जेल से छूट तो ले? उसी दिन उन्हीं की बन्दूक से दाग देगी!···धरती से हमेशा के लिए जुलुम की विदाई कर देगी!

गाँव-गिरान के लोग भी समझेंगे इस युग में भी फूलबसिया जिन्दा है। डोमिन फूलबसिया ने इन्दर को मात कर दिया था। रतनपुर के कई हत्यारों को मात करना है।···एक-से-एक इन्दर वहाँ है। शिवजी मालिक की आँखें न निकाल लीं तो रेवती नाम नहीं। जेल में रेवती का यही एक संकल्प है।

आधी-आधी रात को रेवती को लगता है, कई लाख आवाजें 'फूल बसिया', 'फूल बसिया' कहकर पुकार रही हैं।

"डोमनी तोर फुलवा के मारल मिरगवा
जरि गइले सरग कठोर···"

खूब छक-छककर गाता है इन्दर! लोग झूठ-मूठ कहते हैं कि वह बादलों का राजा है। धरती माई की प्यास बुझाने के लिए इन्दर इतना दुराचारी कैसे हो गया है। ऐसे दुराचारी को हम लोग ऊँचा पीढ़ा कैसे देते हैं? इसके माथे पर इज्जत का सेहरा कौन बाँधता है? शिवजी मालिक का पूत! मूड़ी मरोड़कर हाँडी में कसने के लायक है।

रेवती चिहुक-चिहुक उठती है, जैसे 'लरकोर' सपनाती हो।···मुरकी के उस पार जामुन के पेड़ की कल्पना करती है, जिस पर बगुले के जोड़े मँजोरिया में चमकते हैं। नीड़ खाली है, जोड़े डाल पर फुदककर एक-दूसरे से सटे-सटे बैठे हैं। दुनिया से निश्चिन्त। जैसे जीवन में कहीं किसी हलचल या तूफान का संकेत नहीं हो। रह-रहकर डैने फड़फड़ाते हैं, जैसे जिन्दगी के सारे विघ्नों को झाड़ रहे हों।

···यहाँ फूलबसिया नीड़ में अकेली है। दाँत किटकिटाए भी तो किस पर? सामने लोहे की लम्बी तनी छड़!···एक नहीं, दो नहीं, कुछ मिला कर बारह। निकल भागना मुश्किल है। पंख भी उगे तब भी छड़ों के बीच रेता कर टूट जाएँगे। जेल के सामने ही जेलर की कोठी है। संतरी

वैनट पर ही लोक लेंगे !

जेलर है या बहेलिया !

आदमी कभी अकेला नहीं रहता। मगर बहेलिए ने रेवती को इस कोठरी में अकेला डाल दिया है। कभी-कभी सोचती है, अपने नम्बर का फाटक तोड़कर उड़ जाय।···ईआ जी के पास ! टोला-पड़ोस के लोगों के पास ! सोच-विचार करती रेवती भोर कर देती है। इधर जमादारिन नम्बर खोजती है, उधर हर रोज की तरह प्रभाती गूंजती है।

"उठ जाग मुसाफिर भोर भई, अब रैन कहाँ जो सोवत है
जो सोवत है वह खोवत है, जो जागत है सो पावत है···"

रेवती रैन को सोचकर काटती है और भोर जागकर। बराबर की तरह जमादारिन अपनी भद्दी और डरावनी आँखें फाड़कर दरवाजे पर मुस्कुराती है। रेवती अनायास ही पागल की तरह पूछ देती है, "मेरा नाम जानती हो, जमादारिन जी ?"

उसके मुंह से 'दीदी' न सुनकर जमादारिन को कुछ-कुछ अचरज होता है। "जानती काहे नहीं हूँ रेवती नाम को ?"

"उहुंक !"

"फिर ?"

"फूलवसिया।"

"फूलवसिया ? जमादारिन चकराती है।

"हूं ! यह घर का नाम है, ईआ जी का दिया हुआ।"

"कौन ईआ जी ?"

"मेरी सास। ठीक तुम्हारी उमिर की।"

जमादारिन क्या समझती है फूलवसिया को ? वह पगली समझकर टाल जाती है और कहती है, "ये लो किताब। कल शाम को ही सात नंबर वाली अंजु ने दिया था। जेलर से 'ओडर' करा लिया है। जेलर बाबू तुम्हारी पढ़ाई की बात से बहुत खुश है। तुम सबके लिए कोई सरकारी मास्टर आनेवाला है।"

"मुझे मास्टर की जरूरत नहीं है, पढ़ना जानती हूँ।"

"इसीलिए तो किताब लायी हूँ।। रख ले इसे ?"

रेवती उसके हाथ से किताब ले लेती है। वह किताब को उलटती-पलटती पूछती है, "सरकार जेल भी देगी और पढ़ाई भी कराएगी, इसका क्या मतलब है?"

"गांधी जयन्ती के दिन से।" वह रेवती का मतलब नहीं समझती?"

"गांधी जयन्ती का मतलब?"

"जेलर से पूछना।" जमादारिन बड़बड़ाती हुई चल देती है, साली का भेजा खराब है···?

रेवती सोचती है, जेलर से लेकर कैदी तक गांधी जी का बहुत नाम ले रहे हैं। गांधी जी के कहने पर ही तो उसके बाबू 'सुराजी' बने थे और गांव के ही कुछ धनी बाबुओं ने अंग्रेजों से मिलकर मुखबिर का काम किया था। बाबू बीच बघार में अंग्रेजों की गोली खाकर मरे थे। गांधी जी इस दुनिया में नहीं हैं और न रेवती के बाबू ही रह गए हैं। परन्तु रेवती का सारा परिवार ही सुराजी है—चाचा से लेकर सवांग तक।

रेवती को यही बात समझ में नहीं आती कि गांधी जी का नाम लेकर सब कुछ कहनेवाले लोग इतने निर्दय कैसे हैं? गांधी जी ने ही तो हमें सुराज दिलाया है। जमादारिन भी गांधी जी का नाम बड़ी श्रद्धा से लेती है। वह धीरे-धीरे समझ गयी है कि यह भी हवावाली औरत है।

जेलर बेंत नचाता हुआ प्रायः हर वार्ड के सामने से दिन में दो-तीन बार चक्कर लगा जाता है। रेवती उसे देखते ही घृणा से उबलने लगती है, परन्तु बनावटी विनम्रता ओढ़कर चुपचाप हाथ जोड़ लेती है।

"क्या है रे औरत? बच्चे किस तरह हैं?" जेलर सलाखों पर बेंत मारते हुए पूछता है।

रेवती सहमकर पीछे की दीवार से टकराती है। "सब आपकी दया है, सरकार!"

"गांधी जी को तू भी जानती है?"

"अरे गांव-घर के सभी लोग जानते हैं, सरकार!"

जेलर अट्टहास करता है। "जमाना एकदम बदल गया है। है न? सभी चोर-डकैत भी उन्हें जानने लगे हैं।"

"यह सब तो आपकी चिन्ता है, सरकार। मैं क्या जानती हूं?"

"वाप रे !" जेलर जोर से वोलता है। "किताव भी पढ़ लेती है तू ?" आँखें फाड़कर जमीन पर पड़ी एक पतली-सी किताव की ओर देखता है।

"इसे दीदी दे गयी थीं। पढ़ने में मन विलकुल नहीं लगता है।"

"क्यों ?"

"यह तो 'मेला घुमनी' किताव है। ऐसी किताव मैं नहीं पढ़ती।"

"साली भारी चार सौ वीस है।" जेलर गलियाता हुआ वगल के वार्ड की ओर वढ़ता है।

रेवती मुंह में थूक वटोरकर वहीं से फेंकती है। जेलर अगर सलाखों के सामने खड़ा होता तो उसके मुंह पर थूक भचाक से आकर पसर जाता। जेलर की पीठ पर नजर गाड़ते हुए रेवती वड़वड़ाती है, "सुन लो जेलर साहेव, मैं असली सुराजी की वेटी हूं। आँखें निकाल लूंगी ?···तुम्हारी सही जात मैं पहचान गयी हूँ। तुम सव एक हो। मुझे जामिल-फाँसी की कोई चिन्ता नहीं है।"

जमादारिन पता नहीं किधर से आकर पूछती है,"किससे वकवास कर रही थी तू ?"

"वही जेलर का वच्चा अभी गलियाकर चला गया है।"

जमादारिन गिद्ध की तरह आँखें फैलाती है, "गलिया तू रही है और उल्टे जेलर वावू वेचारे को वुरा-भला वकती है ? वह अपने सात साल के वच्चे की उँगलियाँ पकड़कर खींचती है।

रेवती की नजर जव उसकी आँखों की ओर जाती है तव उसके मन में जमादारिन के प्रति एक अजीव तरह का घृणा मिश्रित मजाक उठने लगता है। वह कहती है, "लड़के को पहली वार यहाँ लायी हो, दीदी। वच्चा तुम्हारा ही है न ?"

जमादारिन चौंकती है। "तव क्या तुम्हारे वाप का है ?"

"भगवान न करे यह मेरे वाप का हो।"

"इतनी जवानी में मत ऐंठन रख रेवती !" जमादारिन उसे समझाने की चेष्टा करती है। "दो वच्चे हो गए हैं। अव जवान नहीं रही है तू।"

"मगर तुम तो अभी भी वहुत अच्छी लगती हो। जवानी चढ़ने पर सुअरी भी वहुत अच्छी लगती है। काहे जमादारिन जी ?" रेवती हँसती

जा रहा है।

"अभी जेलर से डंडा करवाती हूँ।"

'रेवती खिलखिलाकर हँसती है। "सुनती हूँ, इस लड़के का बाप भी कोई सिपाही है। है न, दीदी?"

"तुम्हें किसने बताया?"

"सुनती हूँ कि तुम लोगों के अधिकांश लड़के जेलर से लेकर सिपाहियों तक के ही हैं। तुम्हारे बारे में तो बिलकुल पक्की खबर है।"

"मेरे बारे में कौन अन्ट-सन्ट बकता है? बता दे तू उसका नाम अभी? देखना, मैं उसका क्या करवाती हूं।"

"सच ही बता दूं, जमादारिन जी?"

"हां, तू सच ही बता दे।"

"सचमुच?"

"देख, तू बुझौवल छोड़! सच बोल।"

"अच्छा तो लो जमारिन जी, सच बोलती हूं। मुझे मंजू दी बता रही थी।"

"वह सात नम्बर वाली?"

"हां, जमादारिन जी?"

जमादारिन एकदम हैरत में पड़ती है। "इस वार्ड में आने के बाद तुम्हारी मुलाकात मंजू से नहीं हुई। एकदम झूठी बात है।"

"सात नम्बर में तो मैं भी रही हूं। तभी बता रही थी।"

"पहले तू मुझे कैसे जानती थी?"

"बड़े नामों के साथ तुम्हारा भी नाम सुनती थी।" रेवती के मुंह से अनायास ही सारी बातें निकलती जा रही हैं। उसे इन सारी बातों से क्या वास्ता? मगर जमादारिन समझती है कि सच्चाई कहाँ है? सच्चाई है तभी तो रेवती को जवाब देने में वह लड़खड़ा जाती है।

'तुम्हारे ये दोनों किसके हैं?" जमादारिन कहती है।

"सच बताती हूँ। ये मेरे दोनो पतियों के ही हैं। इसे तो दुनिया के सामने ढोल पीटकर बताती हूँ।"

"तू खुद रंडी है और दूसरों को गालियां बकती है।"

रेवती जमादारिन की इस बात को बर्दाश्त नहीं कर सकी और लोटा उठाकर जमादारिन के ऊपर फेंक दिया है। जमादारिन अपने लड़के को खींचती हुई भागती है और हांफती जा रही है।

११

ईश्रा जी दौड़-धूप कर थक गयी हैं। कनेआ से भेंट करने का आज तक संयोग नहीं हुआ है। बीस-पच्चीस दिन तक लगातार दौड़ती रह गयी हैं। मगर जेल पर कोई भी सुनने वाला नहीं है। रेवती के साथ ही गांव के और भी कई लोग जेल गए हैं। जेल पर पहुंचने पर मालूम होता है कि इन लोगों का मामला दूसरा है। ये 'नक्सलाइट' हैं। इनसे किसी को भी मिलने की इजाजत नहीं है—रेवती से तो और भी नहीं है।

परदेसिया बाबू की चिट्ठी अभी भी अंचरा के कोने पर बांधे फिरती हैं। जब तक कनेआ खुद नहीं पढ़ लेती तब तक इस चिट्ठी का मोल ही क्या है। यही चिट्ठी तो इन दिनों ईआ जी की 'शक्ति' है। नहीं तो कनेआ और सुबल भी तो इन्हें छोड़ गए हैं!

सुबल जेल पर नहीं आ सकता है। उसके दुश्मनों की कमी नहीं है। गांव में अभी भी दो चौकियां पुलिस रहती है। टोले से बाहर निकलने में भी कम जोखिम नहीं है। पुलिस पूछते-पूछते तंग कर देती है। बहुत कहने-सुनने के बाद तो गांव से बाहर जाने की इजाजत मिलती है। ऐसी हालत में सुबल के लिए टोले में घुसना और फिर निकल जाना कितना भारी जोखिम है! गांव में बलात शान्ति जरूर है; परन्तु पुलिस धीरे-धीरे कैसे उनकी हो गयी है, यह बात किसी से भी छिपी नहीं है। अभी तो यह लाचारों को ही तंग करने से बाज नहीं आती है। शिवजी मालिक अभी तक चावल, मुर्गियां और बकरियां पुलिस-चौकियों पर पहुंचाता है। पुलिस के खून में उसका 'नमक' घुल-मिल गया है। पुलिस के इस खून को बदलते बहुत वक्त लगेगा। शायद, रेवती जैसों के बेटे जवान हों तभी संभव हो सकता है।

ईआ जी को अपने पोतों का ध्यान आता रहता है।

कनेआ क्या सचमुच ठीक कहती है कि पोते के हाथों में खाली भाले-गंडासे हैं ? ईआ जी ने कनेआ को ऐसे इक्कीस बेटे पैदा करने के लिए आशीर्वाद दिया था। इस गाँव के जुल्म को पलटने के लिए तो यही काफी होंगे। ईआ जी को अब अपनी मूर्खता पर हँसी आती है। सच ही तो कनेआ कहती है, गरीब की कोई कुंडली नहीं होती। इसीलिए अमीरों को ही इसकी चिन्ता ज्यादा होती है। तब भी लव-कुश को जेल में रहते छः महीने से भी ऊपर हो रहे हैं। रानीगंज से परदेसी बाबू की चिट्ठी अभी तक ईआ जी के अंचरा में पड़ी है। दूसरे से पढ़वाकर ईआ जी को बाबू का हाल-समाचार मालूम हो गया है। बाबू ने इतना ही लिखा है वे जल्दी ही गाँव लौट रहे हैं। तबसे इन्तजार करते-करते ईआ जी थक गयी हैं। धीरे-धीरे विश्वास बँधने लगा है—जब बाबू ने कई साल से कोई खोज-खबर नहीं ली तो अचानक इस पोस्ट-कार्ड का क्या मतलब है ? जरूर किसी ने मजाक किया है। बाबू का मन गाँव से उचट गया है। अब बाबू लौटकर क्या आएँगे ! अब तो लव-कुश ही बाबू के पौधे हैं। यही कुछ दिनों में पेड़ बनकर फैल गए, तब शायद ईआ जी को छाया मिले, नहीं तो इस बुढ़ापे की लाठी सुबल, कनेआ सब-के-सब हाथ से निकल गए हैं···!

बहुत कोशिश-पैरवी के बाद ईआ जी और गाँव के दूसरे-दूसरे लोगों को अपने गाँव के जेहलियों से मुलाकात की इजाजत मिली है।

मगर यह क्या ? कनेआ तो लव-कुश के साथ फाटक के भीतर ही है। कैसा भाग्य है कि वे लपककर अपने दोनों पोतों को गोद में भी नहीं उठा सकतीं। लव दादी को देखते ही छटपटाने लगता है। रेवती और ईआ जी दोनों पता नहीं कब से फफक रही हैं। ईआ जी बाहर से ही रेवती को समझाती हैं, "जाने दे, कनेआ ! रो मत बेटी। अब तो गाँव के लोग बहुत बड़ी लड़ाई लड़ने लगे हैं। रो-रोकर अपने भीतर कमजोरी मत ला।··· हमें तो बस इन्हीं दोनों पोते का आसरा है। ये पेड़ की तरह जल्दी-जल्दी सयाने हो जाएँ। रो मत रे, कनेआ। ये जरूर जुल्म का बदला लेंगे···जरूर लेंगे ! यह ले चिट्ठी, कनेआ। बाबू की चिट्ठी है। छः महीने से अंचरा में बाँधे फिरती हूँ। यह ले।" ईआ जी पोस्ट-कार्ड सलाखों के बीच में

बढ़ाती हैं।

"बाबू की चिट्ठी आई है!" रेवती बेहताश लपकती है और ईआ जी के हाथों से पोस्ट-कार्ड झपटकर जोर-जोर से पढ़ने लगती है, "सोसती श्री सरव उपमा जोग सुदेव की ओर से बाबू और माई को पायलागी और सुबल को आशीर्वाद पहुँचे। बाबू की तबीयत कैसी है? आगे माई को मालूम कि रानीगंज पहुँचते ही मुझे रिक्शा खींचने का काम मिल गया था। मगर दूसरे ही दिन एक घटना हो गयी थी। एक सिपाही के साथ दारोगा मेरे रिक्शे पर थाने तक आया और जब मैं पैसे माँगने लगा तो उसने मुझे भद्दी गालियाँ दीं। माई रे! यही नहीं, उसने पटक-पटककर मुझे बहुत मारा और राहजनी के केस में जेल भिजवा दिया। तभी से कई जेलों में भटकता रहा हूँ। बीच-बीच में पता चलता कि मुझ पर मुकद्दमा चलने वाला है। मुकद्दमा चलने के बाद थोड़े दिनों की सजा होगी और मैं जेल से छूट जाऊँगा। मगर अब तो कई साल बीत गए हैं। मैं तो तमाम दुनिया से निराश हो गया था। मगर इधर पता चला कि मेरे जैसे लोग एक, दो रोज में छोड़ दिए जाने वाले हैं। मैं छूटते ही घर आऊँगा। थोड़ा लिखना, ज्यादा समझना।" चिट्ठी समाप्त होते ही रेवती उल्लास में आँखें फाड़-फाड़कर ईआ जी की ओर ताकने लगती है।

"छः महीने हो गए हैं। फिर न बाबू पकड़ लिए गए हों!" ईआ जी और भी जोर से रोने लगती है।

"रोओ मत, ईआ जी! वे दुनिया में हैं तो जरूर आएँगे। आने वाले ही होंगे। देख लेना ईआ जी, वे मुझे जेल से छुड़ाकर जरूर ले जाएँगे।"

"हमारा भी भाग्य कैसा है रे, कनेआ। हम सभी जेल के लिए ही जनमे हैं क्या? अब तुम्हें बाबू पहचानेंगे? नहीं पहचानेंगे···।"

"नहीं ईआ जी, नहीं। वे मुझे जरूर पहचानेंगे। अपनी मेहरारू को कौन मरद नहीं पहचानेगा। उन्हें आने तो दो। मैं तो सबसे पहले उन्हीं की न हूँ, ईआ जी! देखना, वे मुझे छाती से लगा लेंगे!"

"बाबू का पहला हक तो है ही रे, कनेआ! सुबल तो दुनियादारी के चलते तुम्हारा मरद बना है।"

"सचमुच, ईआ जी!" रेवती उल्लास में बोलती है, "वे सचमुच मुझे

स्वीकार कर लेंगे न ?"

"जरूर रे कनैआ, जरूर ! बाबू को आ तो लेने दे।···मगर अब क्या आएँगे। चिट्ठी को आए तो छः महीने से ऊपर हो गए हैं।"

"ऐसे मत बोलो ईआ जी, वे जरूर आएँगे !···आज-कल में आएँगे। उन्हें तो आना ही है।"

सिपाही बीच-बीच में बोल देता है, "जल्दी करो लोग। समय हो गया है। दोपहर से ज्यादा समय हो रहा है। मुझे भूख लगी है।"

ईआ जी उलट-उलटकर सिपाही को देख लेती है। मगर इतनी नफ़रत मन के भीतर भरी हुई है कि कुछ बोलने की इच्छा ही नहीं होती। थोड़ी ही देर बाद सिपाही के बार-बार दबाव से रेवती के गाँव के लोग पीछे की ओर लौट जाते हैं। रेवती की आँखें फिर डबडबाती हैं। वह मुन्ना को गोद में लेकर खड़ी हो जाती है और लव का हाथ पकड़कर अन्दर की ओर मुड़ जाती है।"

रेवती को संतोष यही है कि 'उनकी' चिट्ठी ईआ जी इसी के पास छोड़ गयी हैं। हो सकता है, जान-बूझकर छोड़ गयी हों।

दूसरे दिन जमादारिन रेवती से पूछती है, "घरवालों से क्या-क्या बातें हुईं रे ?"

"मेरे 'वो' परदेश से लौट रहे हैं, जमादारिन जी !"

"तब तुम्हें क्या फायदा है। जेल से छूटकर जाओगी तब न ?" जमादारिन उसके भोलापन पर हँसती है।"

"'वे' मुझे यहाँ से ले जाएँगे।"

"कैसे रे ?"

"जेल का फाटक तोड़कर।"

जमादारिन मुअरी की तरह मुँह बना लेती है। "सरसक जेलर तुम्हें डाकू नहीं कहते हैं। वाह रे ! कैसी खूँखार मेहरारू है ?"

"तुमको मैंने गालियाँ दी क्या जमादारिन जी ?"

"अपने मरद से जेल का फाटक तोड़वाएगी न ? उसे भी पकड़कर अन्दर मँगवाती हूँ।"

रेवती अपने दोनों हाथ जोड़ लेती है। "एक प्रार्थना है, जमादारिन

जी ! उन्हें भी इस वार्ड में भेजवा देना। हम साथ-साथ रहेंगे। तुम्हारा और जेलर का बड़ा उपकार होगा, दीदी !"

"चोप्प !" जमादारिन कर्कश आवाज में चिल्लाती है और जाने लगती है।

पता नहीं, रेवती को कैसा बल आ गया है कि वह लगातार हँसती जा रही है। जमादारिन के सामने से ओझल हो गयी है। तब भी रेवती का उल्लास कम नहीं हो रहा है। उसके दोनों बच्चे मुँह ताक रहे हैं। उनका पोस्ट-कार्ड उसके हाथ में है। वह बार-बार उसे पढ़ती है और हँसती जा रही है।

यह रात भी गजब हो गयी है। काटे नहीं कट रही है। जेल में आने के एक हफ्ता तक ऐसी ही बेचैनी थी फिर धीरे-धीरे आदत बन गयी है। मगर आज फिर वही बेचैनी क्यों है ? ईआ जी के आ जाने से तो नहीं ? या 'उनका' यह पोस्ट-कार्ड ही सोने नहीं दे रहा है ! 'वे' आएँगे—यही कम उल्लास की बात नहीं है। सामने वाले वार्ड से कैदी एक साथ मिलकर गीत गा रहे हैं। रेवती अनायास ही उनके स्वर के साथ गाना शुरू कर देती है—

"तनी खाड़ा होके सोचऽ एक छन भइया,
काहे चलत बाटे गोली दनदन भइया,
केहू के अतुना बा अन्न, भरल बाटे लाख मन,
केहू के मर लोप जुरे ना कफन भइया···।"

ये अपने नैहर के आसपास के लोग तो नहीं है। रेवती को आज अचानक ही ध्यान आ रहा है। हो सकता है, सुबल भी पकड़ाकर आ गया हो। ये सुबल की टोली के भी तो हो सकते हैं ? सारा इलाका 'जेहली' होता जा रहा है। ऐसी हालत में 'वे' अचानक चले भी आते हैं तो अपने लोग उन्हें कहाँ मिलेंगे। ईआ जी को क्या भरोसा कि वे कहाँ रहेंगी। रेवती, सुबल···सब लोग जेल में हैं। तब कहीं 'वे' आकर परदेस लौट न जाएँ !

रेवती की आँखें अचानक बरसने लगती है। एक बार के लिए 'वे' मिल जाते ! बस, उन्हें असली बात का पता चल जाता। उन्हें मालूम तो हो जाता कि यह रेवती अन्त-अन्त तक उन्हीं की है···रोआँ-रोआँ से उन्हीं

की है। रेवती का हृदय चीरकर कोई उनकी मूरत मिला से। सुवल के साथ दोबारा घर कर लेने से क्या हो जाता है—रेवती का सम्पूर्ण शरीर तो उन्ही की धरोहर है न ! यह सम्पूर्ण बेदाग है। सुबल भी तो एकदम भोला है। भइया को पाते ही उनकी रेवती उनके चरणों में सौंप देगा। फिर तो रेवती के लिए कोई चिन्ता की बात नहीं है। चिन्ता है तो बस एक ही बात की—इस जेल में रेवती कब तक निठल्ला जिंदगी काटती रहेगी ?

क्या सचमुच सुबल भी जेल मे आ गया है ? सामने के वार्ड वाली कैदियों की बोली थाहने की कोशिश करती है। उनकी सम्मिलित आवाज को अलग-अलग बाँटकर थाहने की कोशिश करती है। अगर मान लिया, सुबल जेल में हुआ भी तो उससे मुलाकात कैसे होगी ? उसे कैसे मालूम होगा कि उसके भइया आने वाले हैं। जमादारिन से लेकर जेलर तक—सभी तो एक-से-एक बढ़कर खूंखार हैं। रेवती का यहाँ सुनने वाला ही कौन है ?

दूसरे दिन वह जमादारिन से पूछती है, "सुबल को जानती हैं, दीदी जी ?"

"कौन, सुबल ?" जमादारिन उल्लू की तरह आँखें गड़ाकर पूछती है।

"मेरा देवर है, मरद भी है।"

"छिः-छिः !" जमादारिन दरवाजे के ऊपर ही थूक देती है, "मुझे तुम्हारे पेशे से क्या मतलब है।"

"क्या कहती हो, दीदी जी ?"

"तब और क्या रे ! तुम्हारी तरह मैं रंडी हूँ क्या ?"

रेवती के बदन में आग लग जाती है। वह दरवाजे के पास झपटकर जमादारिन को पकड़ लेती है। "कलमुँही ? उल्लू की औलाद ? मुझे गालियाँ बकती है। सिपाहियों के साथ तू रंडी का काम करती है। छिनाल…!" रेवती अपने दोनों हाथों से जमादारिन के माथे के बाल पकड़कर खींच रही है।

जेल के अन्दर पगली घंटी टनटना उठती है। बन्दूकधारी सिपाही चार-दीवारियों के पीछे चौकन्ना होकर दौड़ रहे हैं। वार्डों के भीतर सम-

वली मची हुई है। बिना किसी पूर्व योजना के कौन-सी घटना हो गयी कि जेलर को पगली घंटी बजवाने की ज़रूरत पड़ गयी है?

कई महिला वार्डेन रेवती को पकड़कर मार रही हैं। दो-तीन सिपाही लव-कुश को खींचकर पकड़े हुए हैं। दोनों बच्चे माई के साथ ही चीख रहे हैं और जेलर हाथ में रूल लिए हुए चुपचाप हत्यारे की तरह खड़ा है।

वार्ड में ही रेवती अर्द्ध-नग्न पड़ी-पड़ी छटपटा रही है। चोली तार-तार फटकर लटक गयी है। लगभग चार-पाँच घंटे बाद उसे लोग उठाकर अस्पताल में फेंक आए हैं। रेवती रात-भर बड़बड़ाती रही है। जिस महिला वार्डेन की उसके साथ ड्यूटी है, वह डर से उसकी बातों को समझने की कोशिश नहीं करती है। जमादारिन ने ही अचानक कहीं से देख लिया तब एक मिनट में जेलर से बोलकर नौकरी से छुट्टी करा देगी। मुआ जेलर भी कम शैतान नहीं है। उसका चेहरा कहीं से भी नहीं लगता कि वह कभी आदमी भी रहा है। हमेशा रोब और गुस्से में ही रहता है। उसका वश चले तो सबको फाँसी पर झुलवा दे।

रेवती बेड पर छटपटा रही है। तीन महिला वार्डेन उसे लाठी से दबाए हुए हैं। उसके लव और कुश उसकी आँखों से ओझल कहीं रखे गए हैं। रेवती बड़बड़ाती हुई अपने बच्चों को याद कर लेती है। जेल के भीतर आम कैदियों में जोरों पर चर्चा है कि दस नम्बर वाली नक्सलाइट है। अबसे बेचारी को लाठी-बेड़ी में रखा जा रहा है। लेकिन इस 'अफवाह' से जेलर को प्रसन्नता ही मिल रही है।

वैसे भी रेवती का शरीर जगह-जगह से टूट गयी है। आधा एक घंटे के बाद ही हांफती हुई गिर जाती। जेलर भी निश्चिन्त है कि ऊपर से तो कोई 'आर्डर' है नहीं, कि लाठी-बेड़ी में रेवती को जिन्दगी भर रखना है। यह तो जेलर का मनमौजी आदेश है। जबतक जी चाहेगा नक्सलाइट रेवती लाठी-बेड़ी में ही रहेगी। यह तो जेलर की ही शोध है कि रेवती नक्सलाइट है। दरअसल उसकी क्रूरता के सामने जो भी टिक गया और थोड़ी-बहुत 'सामना' करने की मुद्रा अख्तियार की, कि बस जेलर आँख मूंदकर उसे नक्सलाइट घोषित कर देगा। उसका कहना था, जब तक इस दुष्टा औरत का मर्द इसे लाठी-बेड़ी में आकर देख नहीं लेता तब इस खूंखार

औरत पर 'दया' करने का सवाल ही कहाँ है! जेलर को पता है कि इसका मर्द भी इसी कर्म में लिप्त है।

एक दिन सहानुभूति का नाटक करते हुए जेलर रेवती से पूछता है। "मुझे तुम पर बड़ी दया आती है, रेवती!"

"हाँ, जेलर बाबू!" रेवती हाँफती और रोती हुई बोलती है, "मैं मर जाऊँगी। मुझे अगर मारना ही है तो एक ही बार क्यों नहीं मार डालते?"

जेलर ठठाकर हँसता है, "लाठी-बेड़ी खोलना मेरी मर्जी पर है।"

"आपकी मर्जी कब होगी, जेलर बाबू?"

"एक गाना सुना दो।"

"मैं गाना नहीं गाती।"

"कुछ तो गाती होगी, वही सुनाओ?"

रेवती रोती जा रही है और गा रही है।

तनी खाडा रोके सोचऽ एकछन भइया,
काहे चलत बाटे गोली दनदन भइया,
केहू के अतुना बा अन्न, भरल बाटे लाख मन,
केहू के मरलो प जुरे ना कफन भइया···।

जेलर की स्वाभाविक क्रूरता हठात् उभर आती है और नाटक का आवरण उतारकर फेंकता है। "जी करता है, साली को समूचा रूल पेल दूँ···?"

"मुझे गाना नहीं आता, बताया न? यह भी तो मैंने यहीं आकर इसी जेल में सीखा है। आपको अच्छा नहीं लगता?"

"चुप रह, साली!" जेलर गुर्राता है।

"आप उन्हें क्यों नहीं मना करते जो रात-रात भर गाते रहते हैं?"

"हुँम!" जेलर रूल को सलाखों के ऊपर पटकता है। "भोग इसी तरह जिन्दगी भर।"

जेलर पैर पटकते हुए चल देता है।

रेवती दीवार से लगकर खड़ी हो जाती है और फूट-फूटकर रोने लगती है। कुश माई के पाँव पकड़कर बन्दर की तरह लटका हुआ है। लव को अब रेवती से अलग बच्चों के वार्ड में रखा जाता है। उसकी

सिसकियाँ टूटती नहीं हैं।···सुदेव और सुवल को स्मरण कर गुस्से में वड़वड़ाती है। मोती और ईआ जी के स्मरण मात्र से तो अश्रु-प्रवाह का वेग और भी नहीं थम पाता। रेवती अब वैसी ताकत अपने भीतर महसूस नहीं करती है। उसके भीतर ऐसा आवेग उठता है, मोती कहीं से अचानक आता और उसे हारिल की तरह उड़ाकर नैहर के पोपल गाछ के नीचे ले जाता।···सुदेव और सुवल की दुनिया कैसा भीषण अत्याचार है।···बेटे को महतारी से अलग कर अकेली साँस लेने के लिए विवश कर देना कितनी बड़ी सजा है!···रेवती तो इस काल-कोठरी में सर्वदा के लिए बन्द कर दी गई है। उसे वाहरी दुनिया की लड़ाई के वारे में क्या मालूम है। सुदेव और सुवल को अपने-अपने बच्चों के लिए परवाह ही कहाँ है। वे रेवती को न सही, अपने बच्चों को तो आकर ले जाते? कितने स्वार्थी हैं—रेवती को घुल-घुलकर मरने के लिए छोड़ दिया है। अब उसके मरने में देर ही क्या है। एक वार दोनों को देख लेती। खास तौर से उस विदेसिया को ही वता देती,··· तुम्हारे लिए माया-प्यार आज तस जसकी तस है। तुम्हारी ही याद के लिए तो देवर सुवल को अपना सवांग मान लिया है। जिस क्षण तुम आते उसी क्षण तुम्हारे पाँवों पर गिरकर तुम्हारी हो जाती।···सुवल भी तो अपनी भौजी को अपने भइया को समर्पित कर देने के लिए वायदा कर चुका है।···परन्तु रेवती के 'वो' भारी छलिया हैं। कई वर्षों के बीच एक पोस्टकार्ड डालने के वाद फिर मौन हो गए हैं। आना चाहते तो क्या आ नहीं सकते थे? हो सकता है, गांव पर आ गए हों और किसी ने उन्हें रेवती के खिलाफ वहका दिया हो। तो क्या सचमुच वे इतने कच्चे होंगे? रेवती को उन्हें समझने-बुझने का अवसर ही कहाँ मिला था! उँगलियों पर गिनकर सात-आठ दिन में ही तो परदेस चले गए थे। रेवती की अश्रुपूरित आँखें हठात् नीचे की ओर टटोलती हैं—पाँवों में उस दिन महावर ज्यों-के-त्यों थे! न मालूम कितने धार पाँवों पर टपक पड़े होंगे! आँसुओं का प्रवाह अभी भी नहीं थम रहा है।··· 'वे' उतने कठोर कभी नहीं हो सकते। देवर की तरह उनका भी संकल्प जरूर कठोर होगा। बुरे लोगों का उन पर भी कोई असर नहीं होगा।

सुबल की तरह 'वे' भी पक्के इरादे वाले होंगे !···

रेवती इस तरह कभी विचलित नहीं हुई है, जिस दिन जेल वाले हत्यारे की तरह उस पर डंडे बरसा रहे थे उस दिन भी नहीं । उसे लगता है, बच्चा-वार्ड से लव 'माई-माई' कहकर चिल्ला रहा है । कुछ पाँवों तले सिसकते-सिसकते सो गया है। वह दीवार से लगकर सोने की कोशिश कर रही है। अश्रु-धार उसे सोने भी नहीं दे रहे हैं।

रात्रि का सन्नाटा कैदियों के नम्बर लगाने से रह-रहकर झनझना उठता है। रेवती के भीतर भय और भी तीव्रता से पसरता जा रहा है। जेल का घंटा बारह-बार टनटनाता है। कई लड़कों के रोने की आवाज आती है। रेवती को लगता है कि उसमें एक आवाज जरूर लव की है।··· लव अपनी माई को अपने पास बुला रहा है। रेवती पगली की तरह हठात् कोठरी में चक्कर लगाती है और गेट की शलाखों पर अपनी ठुड्डी टिका देती है। सामने वार्डेन चबूतरे पर ही लुढ़क गई है। सामने पूरब और दक्षिण कोने पर ऊपर संतरी जल्लाद की तरह बन्दूक ताने खड़ा है।

"दीदी !···अरे ओ दीदी जी !···" रेवती धीरे-धीरे वार्डेन को जगाती है, "मेरे पास आओ न, दीदी ! मुझे बहुत डर लग रहा है। मुझसे बातें करो ना ?···

वार्डेन औंधे मुँह खर्राटे ले रही है।

पता नहीं, इधर ईआजी ने महीनों से मुलाकात करना क्यों छोड़ दिया है। ईआजी जरूर आती होंगी ! जेलर ही उनसे मिलने की अनुमति नहीं देता होगा। सारी दुनिया कठोर हो सकती है। ईआजी ऐसा कभी नहीं हो सकतीं। रतनपुर की और भी भयानक हालत होगी। मुद्दई लोग उन्हें गाँव से बाहर निकलने नहीं देते होंगे !···या मौका पाकर ईआजी टोला छोड़कर कहीं चली गई होंगी !···कहाँ गई होंगी ईआजी !

···कोई कागा भी तो ईआजी का संदेश लेकर यहाँ आने वाला नहीं है। कैसी अकेली हो गई है रेवती। बाहर की कुछ भी खबर आती रहती तो मन को साहस मिलता रहता।

···शलाखों पर ही माथे के सहारे लुढ़क गई है और हल्की-सी नींद भी आने लगी है।···परन्तु आँखें अचानक फक से खुल जाती हैं। चार

का घंटा वज रहा है। गाँधी जी का भजन शुरू हो गया है। उधर 'सुराजियों' का कंठ भी फिर से जागने लगा है।

तनी खाड़ा होके सोचऽ ऽ एक छन भइया,

काहे चलत बाटे गोली दनदन भइया···

वार्डेन जगी हुई है। वह रात की लम्बाई पर झुंझलाती है। रह-रहकर उसके मुँह से गालियाँ निकलती हैं। पता नहीं, यह किसे गालियाँ दे रही है। वह दूर तक टहलती हुई रेवती के पास लौट आती है। "आज तुम्हारी डंडा-वेड़ी खुलने वाली है। तुम्हें मालूम है? रात में जेलर बावू हेड से वतिया रहे थे।"

रेवती कुछ जवाव नहीं दे पाती। वह आँखें फाड़-फाड़कर एकटक उसे ताक रही है। रतजगा करते-करते रेवती की लाल-लाल आँखें फूलकर बड़ी हो गई हैं, जिन्हें वार्डेन पहचान नहीं पा रही है।

१२

सुदेव परदेस से लौट आया है। टोले के वगीचे के पास जैसे ही पाँव रोपा था, उसे घर का सारा समाचार मिल गया था—रेवती ने दूसरा घर कर लिया है,···वह जेल में है और माई और सुवल का कोई पता नहीं है। रास्ते में उसे भदई दा मिले हैं। उन्होंने सुदेव को सारी स्थिति समझा दी है।···सुवल वहू को कैसे शिवजी मालिक और रतनपुर के लोगों ने तंग कर गाँव से भगा दिया है और उसके नैहर वालों ने कैसे सुवल के हाथों उसे सौंप दिया है। मगर माई होती तो सारी बातें सच्ची-सच्ची मालूम हो जातीं।

टोले और रतनपुर के वीच एक पुलिस चौकी खुल गयी है। एक मैजिस्ट्रेट के साथ पुलिस के दस-वारह जवान रहते हैं। उनका खेवा-खर्चा रतनपुर के वावू लोग चलाते हैं। पुलिस जव-तव टोले को धमकाती रहती है। और वावुओं के अन्न की गर्मी हुई तो टोले के एकाध लोगों को पकड़कर पीट देते हैं।

पुलिस-चौकी वाला मकान हरिजन स्कूल है। सुदेव, था तब मकान नही था और न कहीं स्कूल का ही नाम था। (स्कूल तो आज भी कही नही है। सरकारी कार्यालय में भले हो। हरिजन स्कूल के नाम पर चारों तरफ से ईंट की दीवारो और छत या छप्पर रहित तीन कमरे हैं।) सुदेव को गौने की पहली रात को अपनी मेहरारू के सामने ही लजाना पड़ा था जब उसने पूछ दिया था—पाठशाला कभी गए नहीं? तुम्हारे गांव कोई स्कूल नही है क्या? सुदेव को उस रात की सारी बातें आज भी ध्यान मे है। उसने अपनी मेहरारू को सारी बातें सच-सच बता दिया था।'''रतनपुर के बाबू लोगों के लडके किस तरह इन्हें तंग करते थे। तभी से हरिजन टोली को पढ़ाई-लिखाई से नफरत हो गयी थी। यह स्कूल तो इधर हुआ लगता है। भदई दा को भी कुछ नही मालूम कि स्कूल के नाम पर यह मकान कैसे खड़ा हो गया है। दो-तीन साल पहले मकान मे काम लगा था। रतनपुर के हरिविलास बाबू खड़ा होकर बनवा रहे थे। तभी से सरकारी कागज पर तो हरिजन-स्कूल है, परन्तु लोग इसे हरिविलास बाबू के खंडहर के रूप में ही जानते हैं। पुलिस चौकी आने के पहले तक यहां हरिविलास बाबू का मवेशी थान और चारा भंडार था। उन्होने अपने खर्च से फूस-पलाश के पत्तों से बथान और भडार की रक्षा के लिए मड़ई बनवा दिया था।

सुदेव का अचरज अभी तक दूर नही हो पा रहा है। ऐसी कौन विपत्ति आ गयी कि रतनपुर और टोले के बीच में पुलिस-चौकी की जरूरत पड़ गयी है। सुदेव की आंखें फट रही हैं, इस चैती के महीने में भी खलिहान ने हजारों मन धान के बोझ पड़े हैं। अभी तक दौनी क्यों नही हुई है? खेतो में पकी हुई गेहूं की बालियां खडी हैं। कटनी भी लगी है। एकाध माह तो बरसात होने वाली है, सुनहली सोनो धान को बालियां आज तक खलिहान मे बिलबिलाती कैसे हैं!

भदई दा उसका हाथ पकड़कर खलिहान मे टाल के पीछे बैठाते हैं और कुछ देर तक उसका हाल-समाचार पूछने के बाद खैनी मलते हुए सारा किस्सा, बयान करने लगते हैं, "तुम्हारे गांव छोड़ने के बाद से तो सारे गांव मे आग लगी हुई है। बाकी सुदेव बबुआ, अब तुम्हारा यह

का घंटा वज रहा है। गांधी जी का भजन शुरू हो गया है। उधर 'सुराजियों' का कंठ भी फिर से जागने लगा है।

तनी खाड़ा होके सोचऽ ऽ एक छन भइया,

काहे चलत बाटे गोली दनदन भइया···

वार्डेन जगी हुई है। वह रात की लम्बाई पर झुंझलाती है। रह-रहकर उसके मुँह से गालियाँ निकलती हैं। पता नहीं, यह किसे गालियाँ दे रही है। वह दूर तक टहलती हुई रेवती के पास लौट आती है। "आज तुम्हारी डंडा-बेड़ी खुलने वाली है। तुम्हें मालूम है? रात में जेलर बाबू हेड से बतिया रहे थे।"

रेवती कुछ जवाब नहीं दे पाती। वह आँखें फाड़-फाड़कर एकटक उसे ताक रही है। रतजगा करते-करते रेवती की लाल-लाल आँखें फूल-कर बड़ी हो गई हैं, जिन्हें वार्डेन पहचान नहीं पा रही है।

१२

सुदेव परदेस से लौट आया है। टोले के बगीचे के पास जैसे ही पांव रोपा था, उसे घर का सारा समाचार मिल गया था—रेवती ने दूसरा घर कर लिया है,···वह जेल में है और माई और सुबल का कोई पता नहीं है। रास्ते में उसे भदई दा मिले हैं। उन्होंने सुदेव को सारी स्थिति समझा दी है।···सुबल बहू को कैसे शिवजी मालिक और रतनपुर के लोगों ने तंग कर गाँव से भगा दिया है और उसके नैहर वालों ने कैसे सुबल के हाथों उसे सौंप दिया है। मगर माई होती तो सारी बातें सच्ची-सच्ची मालूम हो जातीं।

टोले और रतनपुर के बीच एक पुलिस चौकी खुल गयी है। एक मैजिस्ट्रेट के साथ पुलिस के दस-बारह जवान रहते हैं। उनका खेवा-खर्चा रतनपुर के बाबू लोग चलाते हैं। पुलिस जब-तब टोले को धमकाती रहती है। और बाबुओं के अन्न की गर्मी हुई तो टोले के एकाध लोगों को पकड़-कर पीट देते हैं।

पुलिस-चौकी बना मकान हरिजन स्कूल है। सुदेव था तब मकान नहीं था और न वहाँ स्कूल का ही नाम था। (स्कूल तो आज भी वहाँ नहीं है। सरकारी कार्यालय में भले हो। हरिजन स्कूल के नाम पर चारों तरफ से ईंट की दीवारों और छत या छप्पर रहित तीन कमरे हैं।) सुदेव को सोने की पहली रात को अपनी मेहरारू के सामने ही लजाना पड़ा था जब उसने पूछ दिया था—पाठशाला कभी गए नहीं? तुम्हारे गाँव कोई स्कूल नहीं है क्या? सुदेव को उस रात की सारी बातें आज भी ध्यान में हैं। उसने अपनी मेहरारू को सारी बातें सच-सच बता दिया था।""रतनपुर के बाबू लोगों के लड़के किस तरह इन्हें तंग करते थे। तभी से हरिजन टोली को पढ़ाई-लिखाई से नफरत हो गयी थी। यह स्कूल तो इधर हुआ लगता है। भदई दा को भी कुछ नहीं मालूम कि स्कूल के नाम पर यह मकान कैसे खड़ा हो गया है। दो-तीन साल पहले मकान में काम लगा था। रतनपुर के हरिविलास बाबू खड़ा होकर बनवा रहे थे। तभी से सरकारी कागज पर तो हरिजन-स्कूल है, परन्तु लोग इसे हरिविलास बाबू के खंडहर के रूप में ही जानते हैं। पुलिस चौकी आने के पहले तक यहाँ हरिविलास बाबू का मवेशी थान और चारा भंडार था। उन्होंने अपने खर्च से फूस-पलाश के पत्तों से बथान और भंडार की रक्षा के लिए मड़ई बनवा दिया था।

सुदेव का अचरज अभी तक दूर नहीं हो पा रहा है। ऐसी कौन विपत्ति आ गयी कि रतनपुर और टोले के बीच में पुलिस-चौकी की जरूरत पड़ गयी है। सुदेव की आँखें फटी रही हैं, इस चैती के महीने में भी खलिहान में हजारों मन धान के बोझ पड़े हैं। अभी तक दौनी क्यों नहीं हुई है? खेतों में पकी हुई गेहूँ की बालियाँ खड़ी हैं। कटनी भी लगी है। एकाध माह तो बरसात होने वाली है, सुनहली सोनी धान की बालियाँ आज तक खलिहान में बिलबिलाती कैसे हैं!

भदई दा उसका हाथ पकड़कर खलिहान में टाल के पीछे बैठाते हैं और कुछ देर तक उसका हाल-समाचार पूछने के बाद गाँव का सारा किस्सा बयान करने लगते हैं, "तुम्हारे गाँव छोड़ने के बाद से तो सारे गाँव में आग लगी हुई है। बाकी सुदेव बबुआ, अब तुम्हारा ...

टोला खस्सी-बकरी थोड़े रह गया है कि कसाई के सामने अपनी गर्दन झुका दे। असल में बबुआ, रतनपुर के बाबू लोग तो यहाँ के मूल निवासी हैं नहीं। हमारे पूर्वज ही यहाँ के असल निवासी है। परन्तु ये लोग धीरे-धीरे मालिक बनते चले गए। तुम्हारे बाबू, परमा को सब कुछ मालूम था कि जब ये लोग हमारे गाँव आए थे तब बँटाईदारों को चार-पांच बिगहा खेत जोतने के लिए और दो सेर कच्चा चावल या गेहूँ देते थे। सन् ६७ में जब नया सर्वे हुआ सुदेव बबुआ, तब इनकी नीयत बदल गयी। अब कहने लगे कि एक-डेढ़ बीघा खेत और एक सेर पक्का चावल से ज्यादा नहीं देंगे। हमारी तो भूखों मरने की नौबत थी।"

भदई दा खैनी मलने के बाद होठों के नीचे डालते हैं और 'फिच-से' थूकते हुए आगे कहना शुरू करते हैं, "तुम्हारे गाँव से जाने के बाद यहाँ एक और नया काम हुआ है। रतनपुर के बागवाला जो तालाब है न, उसकी मछलियों की बन्दोबस्ती अब हमारे साथ सरकार करने लगी है।"...

सुदेव चौंकता है, "यह कैसी अजूबा बात है भईद दा, पहले तो शिव जी मालिक के अधिकार में तालाब था। क्या मजाल जो बाहरी एक भी आदमी तालाब का पानी छू दे।'

"नयी बात यह हुई है," भदई दा कहते है, "कि तुम्हारी तरह के तमाम नौजवानों ने मिलकर 'मछुआ सहयोग समिति' बनायी है। अब तो छूटकर हम लोगों के लड़के मछलियाँ मारकर लाते हैं। परन्तु तकलीफ की बात यही है कि यहाँ के गरीब नेवाज कलक्टर पर मालिकों ने हाईकोर्ट में मुकदमा कर दिया है।

"ऐसा क्यों किया है?"

"कलक्टर ने शिवजी मालिक, हरिविलास बाबू और सामबिहारी सिंह की बन्दूकें जप्त करा ली हैं।" भदई दा अचानक तालियाँ पीट कर हँस देते हैं, "उनके पास बन्दूकें वापस आ भी जायँ तब भी हमारे लड़के डरने वाले हैं क्या? ठेंगा डरेंगे। चाहे बी० डी० ओ० और मझिआँव के मुखिय गनेसी मिसिर समझा-बुझाकर थक गए हैं, बनिहारों-मजूरों को भर पे खाना दो। मगर कौन सुनता है? उल्टे उन्होंने बँटाईदारी में मिली जमी

की फसल भी काटकर अपने खलिहान में ले गए। सरकार ने एक सौ चौवालिस लगा दिया है। तब भी इनकी जबरदस्ती गयी नहीं है। खेतों से धान काटकर लाते ही थे। हमारी औरतों को बाहर निकलकर पेशाब-पखाना करना भी मुश्किल था। रात भर टार्च जलाकर तंग किया करते थे। हमारे लड़के इसे कैसे बर्दाश्त कर सकते थे? सुदेव बबुआ! इन्होंने भी जान हथेली पर ले ली है। तुम्हारा भाई सुबल और तुम्हारी बहू ही तो हमारी आँखें हैं। पता नहीं, बेचारी जेल में किस तरह होगी। सुबल नहीं होता तो परमात्मा जानता है हमारी क्या दशा हुई रहती। आज सुबल की एक आवाज पर समूचे प्रखंड के हजारों मरद-मेहरारू अपना सिर फट-वाने के लिए भी तैयार हैं।"

"सुबल कहाँ है, दादा?"

"तीन-चार दिनों से भेंट नहीं हुई है।"

"माई कैसी है?"

"उसे तो महीनों से नहीं देखा है। टोले में जब से मालिकों ने आग-लगी और गोली-बन्दूक की है तब से आधा टोला विरान हो गया है। लोग भागकर इधर-उधर चले गए हैं। यहाँ पुलिस चौकी होने के बाद भी डर बना हुआ है। यह खलिहान में जप्त फसल देख रहे हो न, इसके बारे में बाबू लोग कहते हैं कि आग लगा देंगे और पुलिस को बता देंगे कि हरि-जनों ने ही आग लगाकर धारा एक सौ चौवालिस तोड़ा है। हमारे कई लड़कों को डकैती और दूसरे-दूसरे अपराधों में फँसाकर जेल भेजवा दिया है। कचहरी पुलिस से न्याय उठ गया है, बबुआ!"

सुदेव खलिहान के चारों तरफ अपनी आँखें दौड़ाता है। अगहनी अभी तक खलिहान में पड़ी है। एक दो महीने बाद ही तो बरसात शुरू होने वाली है। मालिक लोग साफ इन्कार कर गए हैं—खेत बँटाईदारी पर नहीं थे, मजूर साले बिल्कुल झूठे हैं। हमने इन्हें काम के बदले मजूरी दी है…!

भदई दा उसे घर तक लाते हैं। माई जहाँ बकरियाँ बाँधती थी वह वयान जंगल बना हुआ है। बाहर का दरवाजा खुला है। चबूतरे पर तुलसी झुलस कर झाड़ी की तरह नजर आती है। दोनों घरों में ताले पड़े हैं,

परन्तु ओसारा कुत्तों और सुअरों का बथान बना हुआ है। सुदेव चबूतरे से नाद की ओर देख रहा है। अभी भी नाद ज्यों-का-त्यों पड़ा है। खूंटा भी वैसे ही गड़ा है। नाद फूटा हुआ है और उसमें सड़ा हुआ पानी भरा है। उस पर मच्छड़ों और पिल्लुओं का अंबार है। लगता है, कई बरस से किसी ने नाद को छूआ तक नहीं है। माई का सारा समय तो भाग-दौड़ में ही बीत रहा होगा। पता नहीं भागकर कहाँ रहती होगी। सुबल मिले तो पता चले।···सुबल का मिलना भी तो मुश्किल ही होगा। उसके पीछे तरह-तरह के वारंट, पुलिस, इस गाँव के मालिक···जानें कितने लोग होंगे ! गाँव तो असली महाभारत बना हुआ है। सुदेव आज तक निरक्षर है। रानीगंज जेल में दो-तीन दिन में ककहरा आधा तक सीख गया था, परन्तु न मालूम क्यों कैदियों को रात में पढ़ाने की प्रथा फिर बन्द हो गयी थी। जेल में ही अपना एक यार था—साधोशरण। सिपाही से लेकर कैदी तक—सभी उसे साधु ही कहा करते थे। साधु भी भोजपुर जिले के किसी गाँव का ही रहने वाला था। इसी से सुदेव के साथ उसकी बहुत अच्छी बनती थी। साधु रात भर उसे महाभारत की कथा सुनाता था। सुदेव को महाभारत की बहुत-सी कथाएँ याद हो गयी हैं। अब वह सोचता है तो यही समझ में आता है कि वह महाभारत तो दो राजाओं की लड़ाई थी, पांडवों को कौरव बिना लड़ाई के सुई की नोंक के बराबर भी जमीन देने के लिए तैयार नहीं थे। यहाँ तो मालिक और मजूरों की लड़ाई है। मालिक जो भी अधिकार छीनते गए हैं उसी को वापस लेने की लड़ाई है। अगर यह असली महाभारत नहीं है तो उसकी शुरुआत तो जरूर है।

सुदेव अनायास ही नाद के पास चला आया है। इसी जगह से तो माई के साथ लड़ाई हुई थी। माई ओसारे से कैसे काठ की तरह जवाब-सवाल लड़ाती थी। सुदेव का कलेजा सुन-सुनकर छलनी हो रहा था। मगर माई थी कि वाण पर वाण चलाती जा रही थी। सुदेव सुनते-सुनते तंग आ गया था। वह हरवाही से शाम को लौटकर इसी तरह नाद पर बैठा था। भूख-प्यास से कलेजा ऐंठ रहा था और माई ऐसी कठोर थी कि गौने में ताजा-ताजा आयी मेहरारू के सामने ही वाण पर वाण चलाए जा रही थी। आखिर सुदेव का भी कोई इज्जत-पानी है कि नहीं ? नयी

नवेली मेहरारू क्या सोचती ? यही न बेचारी सोच रही होगी कि 'मरद' कितना बबुआ है—एकदम कमजोर ! सुदेव कितना बर्दाश्त करता ! माई की कसाई बोली नहीं बर्दाश्त कर सका था सुदेव और उसी रात को घर से निकल गया था, दिशाहीन और सुन्दर ! रानीगंज में मामा के गाँव का था, लखन । खान में काम करता था । सुदेव को अच्छी तरह याद है, जब वह रेलगाड़ी पर सवार हुआ था तब लखन ही उसे सोचता हुआ ले जा रहा था । मगर रानीगंज में सुदेव चारों तरफ लखन को खोजकर हार गया था । लखन का पता किसी को भी ठीक-ठीक मालूम नहीं था । दो-तीन दिनों तक तो ऐसे ही मारा-मारा फिर रहा था । संयोग से उसे चार रुपए रोज पर रिक्शा खींचने का काम मिल गया था । सुदेव को बड़ी खुशी हुई थी, थोड़े ही दिनों में सौ-डेढ़ सौ रुपए कमाकर माई के लिए ले जाएगा और उसके हाथों पर पटकते हुए कहेगा, ले माई ! बेटे से बड़ा रुपए को ही समझती थी न ! चबा खूब रुपए ।··· मगर सुदेव की जिद पूरी नहीं हो सकी थी ।···सिपाहियों के साथ उसका झंझट हो गया था और उन्होंने उसे तरह-तरह के मामलों में फँसा दिया था ।···भुक्तभोगी का सामना करने का नतीजा बड़ा बुरा हुआ था । रानीगंज में तो रिक्शा यूनियन भी लड़ती रह गयी थी । मगर कहाँ कोई परिणाम निकला था । यूनियन थककर चुप लगा गयी थी । सुदेव जेल में सड़ता रह गया था । उसे तो विश्वास हो चला था कि जेल में ही पूरी जिन्दगी कट जाएगी । मगर एक दिन अचानक पता नहीं कैसे जेल से छोड़ दिया गया था ।··· माई के सामने पुरानी बातें याद करने से फायदा ही क्या है ! जो बीत गया सो बीत गया । अब तो आगे की सुधि ही जरूरी है । पता नहीं, माई कहाँ होगी, कैसी हालत में होगी ।···जिन्दा होगी, मर गयी होगी ।··· सुदेव का मन तरह-तरह की आशंकाओं से घबड़ा रहा है ।

चारों तरफ अँधेरा फैलता जा रहा है । भरई दा चबूतरे पर खैनी फटकते हैं तो उसकी तंद्रा टूटती है । दादा भूत की तरह यहाँ चुपचाप क्या कर रहे हैं ? थोड़ी देर तक तो उसे दादा का ध्यान ही नहीं रहा है । दादा उसकी प्रतीक्षा में कब तक बैठे रहेंगे ?

तभी अचानक बाहर से आवाज होती है, "अरे, भीतर कोई है हो ?"

परन्तु ओसारा कुत्तों और सुअरों का बथान बना हुआ है। सुदेव चबूतरे से नाद की ओर देख रहा है। अभी भी नाद ज्यों-का-त्यों पड़ा है। खूंटा भी वैसे ही गड़ा है। नाद फूटा हुआ है और उसमें सड़ा हुआ पानी भरा है। उस पर मच्छड़ों और पिल्लुओं का अंबार है। लगता है, कई बरस से किसी ने नाद को छूआ तक नहीं है। माई का सारा समय तो भाग-दौड़ में ही बीत रहा होगा। पता नहीं भागकर कहाँ रहती होगी। सुबल मिले तो पता चले।...सुबल का मिलना भी तो मुश्किल ही होगा। उसके पीछे तरह-तरह के वारंट, पुलिस, इस गाँव के मालिक...जानें कितने लोग होंगे। गाँव तो असली महाभारत बना हुआ है। सुदेव आज तक निरक्षर है। रानीगंज जेल में दो-तीन दिन में ककहरा आधा तक सीख गया था, परन्तु न मालूम क्यों कैदियों को रात में पढ़ाने की प्रथा फिर बन्द हो गयी थी। जेल में ही अपना एक यार था—साधोशरण। सिपाही से लेकर कैदी तक—सभी उसे साधु ही कहा करते थे। साधु भी भोजपुर जिले के किसी गाँव का ही रहने वाला था। इसी से सुदेव के साथ उसकी बहुत अच्छी बनती थी। साधु रात भर उसे महाभारत की कथा सुनाता था। सुदेव को महाभारत की बहुत-सी कथाएँ याद हो गयी हैं। अब वह सोचता है तो यही समझ में आता है कि वह महाभारत तो दो राजाओं की लड़ाई थी, पांडवों को कौरव बिना लड़ाई के सुई की नोंक के बराबर भी जमीन देने के लिए तैयार नहीं थे। यहाँ तो मालिक और मजूरों की लड़ाई है। मालिक जो भी अधिकार छीनते गए हैं उसी को वापस लेने की लड़ाई है। अगर यह असली महाभारत नहीं है तो उसकी शुरूआत तो जरूर है।

सुदेव अनायास ही नाद के पास चला आया है। इसी जगह से तो माई के साथ लड़ाई हुई थी। माई ओसारे से कैसे काठ की तरह जवाब-सवाल लड़ाती थी। सुदेव का कलेजा सुन-सुनकर छलनी हो रहा था। मगर माई थी कि बाण पर बाण चलाती जा रही थी। सुदेव सुनते-सुनते तंग आ गया था। वह हरवाही से शाम को लौटकर इसी तरह नाद पर बैठा था। भूख-प्यास से कलेजा ऐंठ रहा था और माई ऐसी कठोर थी कि गौने में ताजा-ताजा आयी मेहरारू के सामने ही बाण पर बाण चलाए जा रही थी। आखिर सुदेव का भी कोई इज्जत-पानी है कि नहीं? नयी

नवेली मेहरारू क्या सोचती ? यही न बेचारी सोच रही होगी कि 'मरद' कितना बकुआ है—एकदम कमजोर ! सुदेव कितना बर्दाश्त करता ! माई की कसाई बोली नहीं बर्दाश्त कर सका था सुदेव और उसी रात को घर से निकल गया था, दिशाहीन और सुन्दर ! रानीगंज में मामा के गाँव का था, लखन । खान में काम करता था । सुदेव को अच्छी तरह याद है, जब वह रेलगाड़ी पर सवार हुआ था तब लखन ही उसे सोचता हुआ ले जा रहा था । मगर रानीगंज में सुदेव चारों तरफ लखन को खोजकर हार गया था । लखन का पता किसी को भी ठीक-ठीक मालूम नहीं था । दो-तीन दिनों तक तो ऐसे ही मारा-मारा फिर रहा था । संयोग से उसे चार रुपए रोज पर रिक्शा खींचने का काम मिल गया था । सुदेव को बड़ी खुशी हुई थी, थोड़े ही दिनों में सौ-डेढ़ सौ रुपए कमाकर माई के लिए ले जाएगा और उसके हाथों पर पटकते हुए कहेगा, ले माई ! बेटे से बढ़ा रुपए को ही समझती थी न ! बढ़ा खूब रुपए।··· मगर सुदेव की जिद पूरी नहीं हो सकी थी।···सिपाहियों के साथ उसका झंझट हो गया था और उन्होंने उसे तरह-तरह के मामलों में फँसा दिया था।···मुफ्तखोरों का सामना करने का नतीजा बड़ा बुरा हुआ था। रानीगंज में तो रिक्शा यूनियन भी लड़ती रह गयी थी। मगर कहाँ कोई परिणाम निकला था। यूनियन थककर चुप लगा गयी थी। सुदेव जेल में सड़ता रह गया था। उसे तो विश्वास हो चला था कि जेल में ही पूरी जिन्दगी कट जाएगी। मगर एक दिन अचानक पता नहीं कैसे जेल से छोड़ दिया गया था।··· माई के सामने पुरानी बातें याद करने से फायदा ही क्या है ! जो बीत गया सो बीत गया। अब तो आगे की सुधि ही जरूरी है। पता नहीं, माई कहाँ होगी, कैसी हालत में होगी।···जिन्दा होगी, मर गयी होगी।··· सुदेव का मन तरह-तरह की आशंकाओं से घबड़ा रहा है।

चारों तरफ अँधेरा फैलता जा रहा है। भरदे दा चबूतरे पर खैनी फटकते हैं तो उसकी तंद्रा टूटती है। दादा भूत की तरह यहाँ चुपचाप क्या कर रहे हैं ? थोड़ी देर तक तो उसे दादा को ध्यान ही नहीं रहा है। दादा उसकी प्रतीक्षा में कब तक बैठे रहेंगे ?

तभी अचानक बाहर से आवाज होती है, "अरे, भीतर कोई है हो ?

चौकी पर बुलाहट है।"

"हां, भइया।" सुदेव नाद से उतरकर खड़ा हो जाता है। मैं हूं सुदेव। तुम कौन हो?

"मैं इस गांव का चौकीदार हूं, देवन दुसाध।"

सुदेव बाहर निकल आता है। "पायलागी, देवन काका। तुम कैसे हो?"

"ठीक हूं, बबुआ! तुम कब आए हो?"

"आज ही, काका। भदई दा के साथ तनिक घर-दुआर देख रहा था।"

भदई दा भी बाहर आ गए हैं और देवन चौकीदार की ओर खैनी बढ़ाते हैं।

"चौकी पर तुम्हारी बुलाहट है।"

"किस चौकी पर?"

"गांव में जो पुलिस चौकी है—वहीं।"

"किसलिए, देवन काका?"

"दारोगा जी या मजिस्टर साहेब को कुछ पूछना होगा, और क्या?"

"क्या पूछेगा मुझसे?" चलते हुए सुदेव पूछता है।

"कुछ बातें होंगी, और क्या?"

"मैं तो इस गांव में कई साल तक रहा नहीं।"

चौकीदार चुपचाप आगे-आगे चल रहा है। भदई दा एकदम चुप हैं। उन्हें पुलिस के बारे में कुछ-कुछ जानकारी है। पिछले दिनों मलुकादास को भी चौकी पर इसी तरह बुलाया गया था। और थोड़ी देर तक उससे पूछताछ करने के बाद जेल में भेज दिया गया था। इस तरह कई लोगों को फुसलाकर दारोगा ने जेल भेजवाया है। सुदेव के साथ भी वैसा ही सलूक किया गया तब? सम्भावना ऐसी ही है। शुरू-शुरू में शिवजी, हरविलास और सामविहारी सिंह को कुछ दिनों तक के लिए हिरासत में जरूर लिया था, मगर वे दो ही दिनों में छूटकर चले आए थे। गांव वालों की आंखें फटकर रह गई थीं। कसूरवार सीधे बचकर निकल आए थे। टोले पर बन्दूक और गुंडों के जोर जुल्म उन्होंने ही

किया था और सरकार के घर से बेकसूर चले आए थे। इस बीच टोले के कई लोगों को एक सौ चौवालिस तोड़ने के दोष में जेल ले गई थी। अब देखना यही है कि बेकसूर सुदेव के साथ सरकार का क्या सलूक होता है।

अचानक संगीनधारी पुलिस की आवाज सीधे कलेजे में घुस गई है—"हाल्ट!"

सुदेव और भदई दा डरकर खड़े हो जाते हैं। मगर चौकीदार निर्भीकता के साथ उत्तर देता है, "दोस!"

संतरी कहता है, आ जाओ।"

अंधेरे में इनके और उनके बीच एक सिपाही लालटेन रखकर जाता है। फिर भी वे एक-दूसरे के चेहरे को ठीक-ठीक समझ नहीं पाते हैं। मजिस्ट्रेट और दारोगा कुर्सी पर बैठे हुए हैं। भदई दा, सुदेव और चौकीदार सामने ही जमीन पर ही बैठते हैं।

"क्या नाम है, तुम्हारा ?" दारोगा पूछता है।

"सुदेव।"

"कहाँ रहते थे।"

"रानीगंज।"

"क्या काम करते थे ?"

"रिक्शा खींचता था।"

"कब आए हो ?"

"आज ही, सरकार! दोपहर को।"

दारोगा थोड़ी देर तक मजिस्ट्रेट के कान में और फिर अँग्रेजी में बतियाता है।

'यहाँ के बारे में किसने खबर दी थी।" दारोगा फिर पूछता है।

"किसी ने भी नहीं, सरकार।"

"तब कैसे आए हो ?"

"अपने मन से आ गया हूँ। यहाँ आने पर पता चला है कि मेरी माई और भाई यहाँ नहीं रहते हैं।"

"ये सब नक्सलाइट हैं। तुम्हें कुछ पता है ?"

"नहीं, सरकार।"

दारोगा ठठाकर हंसता है। "मेहरारू के बारे में कुछ पता है?"

"जी! वह तो आते ही भदई दा बता दिया कि जेल में है।" दारोगा ौर मजिस्ट्रेट फिर कुछ बतियाते हैं।

"गाँव से बाहर कहीं जाना नहीं होगा।" दारोगा उसे चेतावनी ःता है?

"कुछ काम-वाम करने के लिए भी नहीं?"

"नहीं?"

"पेट का क्या होगा, सरकार।"

"तुम्हारा भाई तालाब का सेक्रेटरी है न? मछलियाँ खूब खाओ। सरकार ने तुम लोगों के हाथ बन्दोबस्त तो कर ही दिया है।"

सुदेव कुछ जवाब नहीं देता है। भदई दा जानते हैं, चौकीदार के साथ सिपाही तालाब में जाल लेकर पड़े रहते हैं। मछुआ समिति के किसी भी आदमी को कुछ भी बोलने की हिम्मत नहीं है। सुदेव इन दिनों गाँव पर नहीं रहता है। उसके रहने पर तो किसी की भी हिम्मत नहीं होती है। कम-से-कम शाम को तो हरिजन स्कूल पर इन दिनों मछलियाँ रोज बनती हैं। रतनपुर के भूस्वामी उन्हें ऊपर से सह देते रहते हैं।

"आज्ञा होती सरकार, तो चलकर कुछ खाने-पीने का इन्तजाम करता।" सुदेव खड़ा हो जाता है।

"मेरी बात समझ में आ गई कि नहीं?"

"हाँ, सरकार। लेकिन कल-परसों अपनी औरत से भेंट करने जेल पर जाना चाहता हूँ।"

"गाँव छोड़कर जाने का हुक्म नहीं है। कहीं जाना हो तो यहाँ पूछकर जाना होगा। नहीं तो तुम भी सब की तरह ठूँस दिए जाओगे।"

"अच्छा, सरकार।"

लौटते समय उन्हें लगता है, बाघ-भेड़िए की माँद से अनायास ही वे भाग आए हों। चौकीदार भी उन्हीं के साथ चल रहा है।

'सुबल से भेंट करोगे, सुदेव बबुआ?" चौकीदार पूछता है।

"तुम्हें सुबल का पता है?" सुदेव को अचरज भी होता है।

"काहे पता नहीं होगा, बबुआ। सुबल ही तो गरीब दुखिया का

बल है।"

"तुम पुलिस के आदमी नही हो ?"

"जैसे वे लोग नौकरी भी करते हैं और धनिकों के आदमी भी हैं, वैसा मैं नहीं हूँ। मैं तो अपने लोगों के साथ हूँ। भदई दा, तुम चुप क्यो हो ?"

"सुन बेटा !" भदई दा बहुत देर बाद बोलते हैं जैसे उनका कंठ अचानक खुला हो। "सुबल तो बराबर छाया की तरह हमारे साथ है। इलाके से दस-बारह हजार जवान वह एक बोली पर इकट्टा कर सकता है। मुर्दई लोगों के पास कलेजा है तो क्यो नही पकड़ लेते हैं उसे ?"

"भाई के बारे मे कैसे पता चलेगा, दादा ?"

"सब पता चल जाएगा, बेटे। सुबल सब कुछ जानता है।" पता नही, क्यो भदई दा की आँखें डबडबा गई हैं। अँधेरे मे अँगोछे से पोंछ लेते हैं। देखते-ही-देखते टोला उजड गया है। एक ही घोसले में बसेरा लेने वाले पंछी पता नही कहाँ-कहाँ बिखर गए है। टोले भर मे कुत्ते-सियार के अलावे दूसरी बोली अब मुश्किल से सुनने को मिलती है। भदई दा की मड़ई मे दो-चार और भी जन हैं इनके घरो मे आग लगने के बाद से ही ये भदई दा की शरण मे आ गए हैं। सुनने मे आया है कि सरकार की ओर से तिरपाल दिए गए हैं, परन्तु मुखिया और बी० डी० ओ० बाबुओं से मिले हुए हैं इसलिए उनसे कोई भी कुछ नही पूछता है। इधर कुछ दिनों मे तो मुखिया छः बजे शाम के बाद घर से भी नहीं निकलता है। उसे भय है कि 'नक्सलाइट' उसे जिन्दा नही छोडेंगे। भदई दा जैसे बूढ़ा आदमी भी इन झूठों की बातें सुनकर गुस्से में काँपने लगते हैं। बाबुओ और मालिकों ने कैसा धोखा खड़ा कर लिया है। जितने गरीब हैं उनकी नजर मे सब नक्सलाइट हैं।

"मुखिया को कौन मार सकता है भदई दा ?" सुदेव डरा हुआ है। उसे दो-तीन वर्षो के भीतर ऐसे परिवर्तनों से स्वयं भी अचरज हो रहा है।

मुखिया एक नम्बर है, बबुआ। अपने पेट से बराबर इसी तरह की बातें गढ़ता रहता है।"

"मगर मुखिया हमारे खिलाफ हरकतें करता रहता है तब तो यह

अच्छी बात नहीं है।"

अँधेरा डरावना होता जा रहा है। यहाँ से स्कूल पर आग का गोला साफ नजर आ रहा है। बाकी सारे गाँव में चुप्पी है। वह सोचता है, ऐसा दिन तो आना ही था। जुल्म जब बढ़ता है तो यही होता है…गरीब तनते हैं और उन पर अत्याचार बढ़ता जाता है।

सुदेव भी जब इस गाँव में आ गया है तब डरने से थोड़े काम चलेगा? इस नए महाभारत में शरीक तो होना ही पड़ेगा।

१३

रेवती की आँखों से आँसुओं के अविरल धार फूट पड़े हैं। शलाखें पकड़कर वह ठगी-सी खड़ी है। वह समझ नहीं पा रही कि उसे ऐसी हालत में क्या करना चाहिए। मन तो बावरी की तरह दौड़कर सुदेव से लिपटना चाहता है, मगर शलाखें, पुलिस और बाहरी-भीतरी लगभग दो-तीन दर्जन आँखें पता नहीं उसे अलग-अलग कितनी नीयतों से घूर रही हैं।

…अभी तक रेवती को विश्वास क्यों नहीं हो रहा है कि उसके 'वो' साक्षात उसके सामने खड़े हैं? अगर आँखें अविश्वास से विचलित हैं तो पानी की अजस्र धारा कहाँ से फूट रही है। बहुत कोशिश के बाद तो सुदेव को अपनी रेवती से मिलने की अनुमति मिली है।

"मुझे पहचानती नहीं सुबल की भौजी? भूल गयी हो क्या?" सुदेव भी डबडबाया हुआ है।

रेवती की आवाज बँध गयी है। कंठ जैसे एक युग से बंद हो गया हो। लव और कुश अजनबी 'मरद' को बार-बार घूर रहे हैं।

'तुम्हारे ही दोनों बबुआ हैं न, सुबल की भौजी?" सुदेव को लगता है, बातों का सिलसिला बढ़ने से रेवती के अवरुद्ध कंठ फूटेंगे।

रेवती अपना माथा हिलाकर इन्कार करती है और जोर-जोर से फफक पड़ती है।

"कुछ बोलती काहे नहीं रे?"

"क्या बोलूं ? कई बरस से तो कंठ ही सूख गया है।" रेवती सिसकती जा रही है।

"ये दोनों किसके हैं ?"

"यह लव है, तुम्हारा और कुश सुबल से है।"

"यह सब कैसे हो गया, सुबल की भौजी ?"

रेवती को अचानक कोई बल मिलता है। "तुम निर्मोही मुझे त्यागकर चले गए। गाँव के गिद्धों से बचना मुश्किल हो गया। मैंने जान पर खेलकर अपनी इज्जत बचाई है। अपनी इज्जत के लिए सुबल के साथ तो घर बसाना ही था। मगर सुबल ने वचन दिया है तुम्हारे आने पर अपनी भइया की इज्जत वापस कर देगा।"

"मुझे तुम पर विश्वास है सुबल की भौजी ! मैं जानता हूं तुम ऐसा कोई भी काम नहीं करोगी जो मुझे खराब लगेगा।" सुदेव अपने दोनों हाथ अन्दर ले जाकर लव और कुश को सहलाना चाहता है।

"तुम मुझे यहां से कब ले चलोगे ?"

"अभी तो हो सकता है मैं भी तुम्हारे पास आ जाऊं।"

"क्या मतलब ?"

"हमारे-तुम्हारे जैसे तमाम लोग तो यहीं आ रहे हैं। हमारे लिए गाँव में जगह ही कहां है ?"

रेवती पता नहीं क्या सोचकर उदास हो जाती है। जमादार दूर से ही देख-देखकर बड़े कुटिल ढंग से हँस रहा है। रेवती जब-तब उसे घृणा से ताक लेती है।

"ये दोनों लड़के किसके हैं रे जवान ?" जमादार वहीं से चिल्लाता है।

"मेरे हैं—अपने खून हैं। तुम्हें काहे शक है जमादार जी ?" सुदेव जवाब देता है।

"जेल में साली बहुत उछलती है।"

तुम्हारे बाप का कुछ लगता है क्या ?" रेवती चीखती हुई कहती है। सुदेव अचम्भे से रेवती को ताकने लगता है और जमादार उसे भद्दी गालियाँ बकता हुआ आफिस के अन्दर हो जाता है।

"सभी साले इसी तरह के पापी हैं मुंवल के भइया !" रेवती शलाखों पर माथा पीटने लगती है। "जेल के वाहर और भीतर चारों ओर ऐसे ही पापी हमारे पीछे पड़े हैं।"

"ऐसे लोग शुरू से ही हम पर कब्जा रखते आए हैं।"

"ईआजी कहां हैं ?" रेवती ही वात पलटती है।

"मैं तो खुद माई से मिलने के लिए वेहाल हो रहा हूं। माई का अता-पता शायद मुवल को मालूम हो।"

"मुवल को पता चल गया है कि तुम गाँव आ गए हो।"

"तुम्हें कैसे मालूम ?" मुदेव अचरज करता है।

"हमें वाहर की घटनाओं की वरावर जानकारी रहती ह।"

मुदेव को वार-वार इच्छा होती है कि दोनों वच्चों को शलाखों से खींचकर कलेजे से साट ले। उसके हाथ स्वतः ही भीतर की ओर लपक जाते हैं। वच्चे डरकर पीछे की ओर खिसक जाते हैं। तव क्या रेवती ने उन्हें यह नहीं वताया कि मुदेव ही उनका असली वाप है ?

'ये मुझसे डरते क्यों हैं ?" मुदेव को थोड़ा क्रोध भी आता है।

"डर तो इनके खून में ही नहीं है। तुमने इनके हाथ नहीं देखे क्या ?" रेवती वच्चों के हाथ पकड़कर मुदेव की ओर वढ़ाती है, "ये तो अपने हाथों में भाले, गड़ासे, वन्दूक लेकर पैदा हुए हैं। ये सीता के वेटे हैं—लव-कुश हैं। देखते नहीं किस तरह चाँद-सूरज की तरह वढ़ते जा रहे हैं।"

मुदेव इशारे से उन्हें अपनी ओर वुलाता है। वच्चे मुस्कराते हुए वढ़ जाते हैं। मुदेव उनके हाथ पकड़कर खींचता है। वच्चे किलकते हुए हाथ अन्दर की ओर खींच लेते हैं। मुदेव गेट खोलनेवाले सिपाही से गिड़गिड़ाता है—या तो वह वच्चों को थोड़ी देर के लिए वाहर आने दे और नहीं तो मुदेव को ही अन्दर आ जाने दे। अपने वच्चों को प्यार करने की वहुत इच्छा होती है।"

सिपाही किसी भी शर्त पर तैयार नहीं है। मुदेव का हहास वाँधकर उत्साह नीचे की ओर उतरता जाता है। पता नहीं इनका संस्कार ऐसे कठोर क्यों होता है ? वच्चों और मेहरारू के साथ भी इनके वर्ताव में को परिवर्तन नहीं आता है। खाकी वर्दी डालते ही ये पत्थर-दिल कैसे हो जा

है ?

"ठीक है, मुवल की भौजी। फिर कभी आऊँगा। अभी चलता हूँ।"

"फिर कब आओगे ?"

"जल्दी ही आऊँगा।"

जमादारिन रेवती के बजाय बच्चों को निर्दय की तरह घसीटती है, ताकि रेवती भी बिना बुलाए काठवाले फाटक के अन्दर चली आए।

सुदेव को जेल पर से लौटकर आते-आते रास्ते में ही अँधेरा हो गया है। रतनपुर का टोला अभी आधा कोस से कम नहीं है। सुदेव अगिया बैताल की तरह लपकता जा रहा है, जैसे गाँव में उसे किसी की प्रतीक्षा हो। उजड़े हुए गाँव में अब सुदेव को किसकी प्रतीक्षा हो सकती है ? अपनी सीता से मिलकर लौट रहा है सुदेव। सीता ने उसे जल्दी ही अपने पास बुलाया है। अभी तो अपनी सीता की मर्यादा हरण करनेवाले शिवजी सिंह की जाँघ तोड़ने के बाद ही सुदेव पुन. लौटेगा। सब ओर कुत्ता अजेय हैं। अपमान का बदला लेने के लिए ही ये पैदा हुए हैं। शिवजी के कारण ही तो सारा गाँव उजाड़ हुआ है—गाँव की दर्जनों सीता लूटी गयी हैं। हत्यारे गाँव में ऐश कर रहे हैं, बेकसूर जेल में हैं। उन्हीं जेलियों में उसकी सीता भी है।

हरिजन स्कूल पर पुलिस चौकी से बन्दूकधारी संतरी अचानक चिंघाड़ता है, "हाल्ट !"

सुदेव हक्का-बक्का खड़ा है जैसे उसे काठ मार गया हो। अभी तक संतरी किरिच-बन्दूक इस तरह ताने हुए है जैसे गोली मार देगा। "बोलता क्यों नहीं है ? कौन है तू ?"

अभी सुदेव को कहाँ ज्ञान है कि कुछ कहे। उसके कंठ में तो लकवा मार गया है। अचानक सटाक-सटाक आवाज करती हुई गोली बगीचे की ओर से छूटती है। सुदेव बगैर कोई आवाज किए वहीं धरती पर लुढ़क जाता है।

थोड़ी देर में पुलिस चौकी से एक साथ टार्चधारी सिपाही निकल पड़ते हैं। एक आदमी लाश को घसीटते हुए पुलिस-चौकी ले जाता है और दूसरे लोग बगीचे की ओर बन्दूक चलाने वाले की ओर दौड़ जाते हैं। संतरी

स्वयं हैरान है कि जब उसने बन्दूक नहीं चलायी है तब गोली अचानक बगीचे की ओर से किसने चलाई है।

रेवती के राम की लाश चौकी में सुबह तक पड़ी है। टोले और फिर अगल-बगल गाँवों से धीरे-धीरे चौकी के चारों ओर भीड़ बेसुमार होती जा रही है। शहर से पुलिस की दूसरी टुकड़ी भी आने वाली है। भीड़ एक-दम काबू के बाहर है।